संजय की कलम से ..

शिवरात्रि पर लीजिए वरदान शिव से

शिवरात्रि शब्द हर चौबीस घंटे में एक बार आने वाले अंधकारमय काल-भाग का नाम नहीं है बल्कि यह शब्द यहाँ एक अलंकार के रूप में प्रयोग किया गया है। जब किसी के साथ कोई खुलेआम अन्याय करता है अथवा अत्याचार या लूट-खसूट, धोखेबाज़ी, नकल या बनावट-मिलावट पर उतर आता है तो वह पीड़ित व्यक्ति कहता है – 'अरे भाई, तुमने तो दिन-दहाड़े लूट मचा रखी है। अरे, दिन में अंधेर! तुमने तो दिन में रात मचा रखी है; ऐसा अंधेर तो रात्रि में भी नहीं होता जो तुमने दिन में कर रखा है!' इस प्रकार के प्रचलित प्रयोग से सिद्ध है कि 'रात्रि' शब्द अंधेर, अन्याय, अत्याचार, धोखेबाज़ी और मारधाड़ का पर्यायवाचक है।

तो सारे कल्प में जब ऐसा समय आ जाता है जबकि मनुष्य लुटेरे, आततायी और निशाचर अर्थात् रात्रि के भूत जैसे काम करने वाले, धर्मभ्रष्ट एवं कर्मभ्रष्ट हो जाते हैं, जब संसार में हाहाकार मच जाता है, तब चूंकि सदा जागती ज्योति परमात्मा शिव इस धरा पर मानव मात्र का कल्याण करने के लिए अवतरित होते हैं; इसलिए इस 'रात्रि' को लोग बाद में 'शिवरात्रि' के नाम से याद करते हैं और हर वर्ष उस सर्वमहान् वृत्तांत की स्मृति में त्योहार मनाते हैं।

परमात्मा शिव का अवतरण तभी होता है जब सारे संसार में घोर धर्मसंकट हो। सभी नर-नारी 'निशाचर' अथवा पतित बन गये हों और घोर अज्ञानान्धकार चहुँ ओर छाया हो। महान आत्माओं का महान ही कर्त्तव्य होता है, परमात्मा का कर्त्तव्य भी 'परम' अर्थात् सर्वमहान् है। अत: उनका शुभागमन तभी होता है जब सभी अशुभ हों, अमंगलमय स्थिति में हों एवं अत्यंत पीड़ित हों।

'कलियुग' और 'रात्रि' – ये दोनों समानार्थक हैं

ऐसा समय तो कलियुग का अन्तिम चरण ही होता है। 'कलियुग' और 'रात्रि' – ये दोनों समान अर्थ में प्रयुक्त होते हैं। जब कोई व्यक्ति अपने किसी धर्म-प्रिय मित्र से कहता है कि 'देखो भाई! कैसा जमाना आ गया है, आजकल तो खुल्लम-खुल्ला दिन-दहाड़े ही रिश्वत ली जा रही है, अन्याय हो रहा है, डाके डाले जा रहे हैं और लाज लूटी जा रही है' तो वह कहता है – 'भाई, क्या आप भूल गए हैं कि यह कलियुग है? कलियुग में तो ये सब होता ही है; यह कोई सतयुग थोड़े ही है?' अत: रात्रि और कलियुग – इन दोनों के इस प्रकार के प्रचलित प्रयोग से स्पष्ट है कि कलियुग की अंतिम वेला में अवतरण के

अमृत-सूची

- एक कैद यह भी *(सम्पादकीय)*..... 3
- प्रश्न हमारे, उत्तर आपके..... 6
- 'पत्र' संपादक के नाम..... 9
- जहाँ करुणा, मैत्री..... 10
- राजयोग से अष्ट शक्तियों.... 11
- परिस्थिति: वरदान या 12
- पुरुषोत्तम संगमयुग..... 15
- मुझे फादर मिल गया..... 18
- अब मैं चिन्तामुक्त हूँ..... 19
- भगवान को बनाइये हमराज.. 21
- मैं अनाथ से सनाथ बन गया. 22
- वृत्ति नियंत्रण के प्रयोग.....23
- जब आवे संतोष धन..... 24
- लौकिक परिवार बन गया.... 26
- मेरी अर्धवार्षिक परीक्षा..... 27
- सचित्र सेवा समाचार..... 28
- भस्मासुर मत बनिये..... 30
- महाशिवरात्रि की बधाई *(कविता)*..... 32

सदस्यता शुल्क

भारत	वार्षिक	आजीवन
ज्ञानामृत	75 /-	1,500/-
वर्ल्ड रिन्युअल	75/-	1,500/-
विदेश		
ज्ञानामृत	700 /-	7,000/-
वर्ल्ड रिन्युअल	700/-	7,000/-

शुल्क केवल '**ज्ञानामृत**' अथवा '**द वर्ल्ड रिन्युअल**' के नाम से ड्राफ्ट या मनीऑर्डर द्वारा भेजने हेतु पता है- संपादक, ओमशान्ति प्रिंटिंग प्रेस, ज्ञानामृत भवन, **शान्तिवन-307510 (आबू रोड) राजस्थान।**

- शुल्क के लिए सम्पर्क करें -
09414006904, 09414154383

कारण ही 'शिवरात्रि' – ऐसा नाम रखा गया है। कलियुग रूपी रात्रि में ही शिव का इस पृथ्वी पर शिवलोक से आगमन अथवा अवतरण होता है। शिव के 'दुखहर्त्ता', 'सुखकर्त्ता' अथवा 'हर-हर' आदि उपनाम भी तभी सार्थक सिद्ध होते हैं क्योंकि कलियुग के अंत में जन-जन के दुख हरकर वह सुख करता है अर्थात् सतयुग की स्थापना करता है। शिव युग-प्रवर्तक हैं, वह युग-पुरुष, नहीं-नहीं कल्प-पुरुष हैं। रात्रि के भी मध्यकाल में, 12 बजे शिव का उत्सव मनाना यही सिद्ध करता है कि अधर्म की पराकाष्ठा के काल में अर्थात् कलियुग के अंतिम चरण में शिव का अवतरण होता है।

शिव के अवतरण-दिवस की कोई तिथि क्यों नहीं?

विचार करने पर आप इस परिणाम पर पहुँचेंगे कि अन्य जो महान् आत्मायें हैं, उनके दिव्य जन्मदिवस प्राय: किसी तिथि से संलग्न हैं। उदाहरण के तौर पर श्रीराम के जन्मदिन को 'रामनवमी' कहा जाता है क्योंकि वह चैत्र मास की नवमी तिथि को मनाया जाता है। इसी प्रकार, श्रीकृष्ण के जन्मदिवस को 'श्रीकृष्ण जन्माष्टमी' नाम से लोग जानते हैं क्योंकि लोग श्रीकृष्ण का जन्म भादों मास की अष्टमी तिथि को मानते हैं। अब प्रश्न उठता है कि जबकि अन्य महान पुरुषों के जन्मदिन किसी तिथि से युक्त किये जाते हैं, परमपुरुष अथवा परमात्मा शिव का जन्मदिवस किसी तिथि से क्यों नहीं जोड़ा जाता? इसके दो कारण हैं। एक तो यह कि श्री राम, श्री कृष्ण या अन्य महान पुरुषों का जन्म तो दैहिक जन्म है, वे शिशु-तन लेकर किसी माता-पिता के यहाँ पालन-पोषण लेते हैं। वे माता-पिता उनके इस जन्मदिन को जानते हैं परंतु परमात्मा शिव तो स्वयंभू हैं, वे श्रीराम अथवा श्रीकृष्ण की भाँति किसी माता-पिता के यहाँ शिशु-तन में जन्म नहीं लेते बल्कि वे तो एक साधारण, वयोवृद्ध मनुष्य के तन में दिव्य प्रवेश करते हैं अर्थात् स्वयं ही साकार (स्वयंभू) होते हैं। जिस मनुष्य के तन में वे अवतरित होते हैं, उसको वे 'प्रजापिता ब्रह्मा' नाम देते हैं। वे उस मनुष्य की आयु-पर्यन्त उसी तन में नहीं रहते बल्कि प्रतिदिन कुछ समय के लिए अपने शिवलोक से आते हैं और उसके मुख-रूप उपकरण का प्रयोग करके अगम-निगम का भेद खोलकर पुन: शिवलोक को चले जाते हैं। अत: उनका अवतरण किसी एक तिथि से संगत नहीं किया जाता। फिर भी फाल्गुन मास वर्ष का अंतिम मास होता है और इस कारण वह कल्प के अंतिम युग अर्थात् कलियुग का प्रतीक होता है। कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी तिथि कलियुग के भी अंतिम चरण की सूचक होती है और उसमें भी अर्द्धरात्रि का समय अत्यंत तमोप्रधानता का द्योतक होता है। अत: शिव के अवतरण का दिन किसी तिथि के साथ युक्त न होकर 'शिवरात्रि' नाम से जाना जाता है।

हम शिव को कैसे देखें?

हम पीछे बता आये हैं कि शिव का कोई शारीरिक अथवा सांसारिक रूप नहीं है बल्कि दिव्य एवं आत्मिक रूप दिव्य ज्योति स्वरूप है। अत: मालूम रहे कि हम परमात्मा शिव से तभी मिल सकते हैं जब हमें किसी भी सांसारिक रूप की स्मृति न आये और जब हम स्वयं भी आत्मिक स्वरूप में स्थित हों क्योंकि नियम यह है कि अव्यक्त स्थिति में टिक कर ही अव्यक्त को देखा जा सकता है।

हम शिव से संबंध कैसे जोड़ें?

शिव का कोई कायिक रूप नहीं है बल्कि उनका रूप आत्मा के रूप जैसा बिन्दु के आकार वाला है। अत: हम भी जब बिन्दु स्थिति में होंगे तभी उस परमपिता से आनन्दमय मिलन का आत्मिक, अभूतपूर्व एवं अत्यंत अनमोल सुख ले सकेंगे। परम आत्मा से मिलन मनाने के लिए देह की सुध-बुध भुलाकर आत्मा-भाव में टिकना होगा। अहा! तभी जीवन का सच्चा सुख मिलेगा, सर्व मनोरथों में से सच्चा मनोरथ पूरा होगा, सभी रसों से उत्तम रस प्राप्त होगा, सभी संबंधों का सामूहिक एवं सच्चा संबंध मिलेगा

(शेष..पृष्ठ 20 पर)

एक कैद यह भी

दुनिया की सभी सरकारें अमन-चैन की बहाली के लिए कानून का निर्माण करती हैं। आपराधिक कार्यवाही करने वालों को कानून के आधार पर सज़ायें भी दी जाती हैं। जैसा अपराध, वैसी सज़ा के अनुसार यदि अपराध अधिक संगीन हो तो उम्र कैद भी हो सकती है।

घर और जेल में अन्तर

अगर देखा जाये तो घर या जेल – दोनों ही का निर्माण, भवन-निर्माण सामग्री से ही होता है। दोनों में ही पत्थर, सीमेंट आदि-आदि पदार्थों का प्रयोग होता है पर फिर भी एक स्थान घर और दूसरा जेल कहलाता है, क्यों? क्योंकि दोनों स्थानों पर अनुभूतियाँ अलग-अलग होती हैं। घर में रहने वाला व्यक्ति स्वतंत्रतापूर्वक मनपसंद खान-पान, रहन-सहन, अध्ययन आदि जीवन-क्रियाओं का आनन्द लेता है। घर से बाहर जब चाहे मनपसंद स्थान पर जा सकता है परंतु कैदी को यह स्वतंत्रता कहाँ? वह तो जिस कोठरी में डाल दिया जाता है, वहीं पड़े रहने को मजबूर रहता है। साथी-स्नेही, जाने-पहचाने लोगों से मिलने-जुलने, उनसे हँसने-बहलने का तो प्रश्न ही नहीं उठता, बेचारे को मुलाकातियों के साथ बातचीत के क्षण भी गिनती करके दिये जाते हैं। अंदर बंधन में पड़ा-पड़ा वह संसार की हर क्रियाविधि से कट-सा जाता है। उसकी उदासी, निराशा, बेचैनी को बाँटने वाला भी वहाँ कोई नहीं होता। उसे जीवन का भार ढोते हुए बेबसी से जीना है, इस इंतज़ार में कि यदि ज़िन्दा रहा तो शायद कभी खुली हवा मिल ही जाये।

शरीर, प्रकृति का उपहार है

भौतिक जगत का उम्रकैदी तो कुछ वर्षों की सज़ा भोगकर मुक्त हो जाता है परंतु आध्यात्मिक दृष्टि से, बेहद के परिप्रेक्ष्य में देखा जाये तो आज सारी मानव जाति ही बंधन में है। आध्यात्मिक दृष्टिकोण रखने वाले लोग गर्भ को जेल कहते हैं जहाँ बच्चा गंदगी के बीच अंधेरी कोठरी में घुट-घुट कर साँस लेता है। कैदी की तरह अंदर पड़ा-पड़ा अपने बुरे कर्मों की स्मृति से तिलमिलाता रहता है, पश्चाताप करता है, भगवान से क्षमा माँगता है। इससे बाहर आकर उसे थोड़ी सुख की साँस आती है परंतु अंधेरी कोठरी से निकलने के बाद भी आत्मा, शरीर (प्रकृति) रूपी जेल में तो है ही। जितनी उम्र इस शरीर रूपी कोठरी की है उतने वर्ष की कैद आत्मा इसमें भोगती है। सांसारिक कैद से तो व्यक्ति उम्र से बहुत पहले छूट सकता है परंतु शरीर की यह कैद तो शरीर के नष्ट होने पर ही छूटती है। यदि एक शरीर छूट जाये तो आत्मा को पुन: नई कोठरी में दाखिल होना पड़ता है पर कैद जारी रहती है।

जीवन प्रकृति और पुरुष का खेल है। इस अर्थ में यह शरीर प्रकृति की तरफ से मिला उपहार है। अब प्रश्न उठता है कि उपहार रूप में मिलने वाले इस शरीर को आत्मा ने जेल क्यों बना लिया? कभी वह रोग-शोक से तड़पकर भगवान से उठा लेने की गुहार लगाती है, कभी धर्म की साधना के लिए मिले इस सुन्दर उपहार को अपने ही हाथों नष्ट करने की सोचती है। कभी घड़ियाँ गिनते-गिनते, कैदी की तरह कठिनाई से दिनों को काटती है और कभी सब कुछ छोड़-छाड़ कर कहीं ओर जा बसने का संकल्प करती है। इस सुन्दर ग्रह को गंदगी, भीड़-भाड़ से भरा देख अब तो चाँद पर नई दुनिया बसाने की योजना बनाई जा रही है परंतु यदि चाँद पर भी पराधीनता की मनोवृत्ति को लेकर ही बसावट की गई तो चन्द्र-दुनिया को धरती-जैसी दुनिया बनने में ज्यादा देर नहीं लगेगी।

स्व का तन्त्र या प्रकृति का तन्त्र

पराधीनता किसकी? किसने बनाया हमको पराधीन? हमसे एक

ग़लती हुई है। हम कहते, मेरा हाथ, मेरा कान, मेरा मुख। तो यह शरीर और इसके अंग मेरे हैं पर इनको मेरा कहने वाला मैं कौन? आत्मा। पर हमने ग़लती से मेरे को मैं मान लिया। यह ग़लती ऐसी है कि संसार की सभी वस्तुयें मिल जाएँ तो भी सुख नहीं मिल सकता क्योंकि हमने स्व (आत्मा) के तंत्र को छोड़ दिया और प्रकृति के तंत्र को स्वीकार कर लिया। हम प्रकृति के गुलाम बन गए। शरीर के बंदी बन गये। शरीर को आत्मा ने धारण किया है, न कि शरीर ने आत्मा को धारण किया। जैसी आत्मा थी, उस अनुसार उसको शरीर मिला परंतु आत्मा स्वयं को भूलकर, प्रकृति के जड़ तत्वों से बने शरीर की गुलाम बन गई है।

अधिकारी या अधीन

पराधीनता का यह प्रश्न किसी व्यक्ति विशेष या देश विशेष का नहीं, सारे विश्व का है। विचार कीजिए, इस समय के सभी मानव, बिना अपवाद के, अधीन हैं या अधिकारी? क्या हमारी मृत्यु हमारे हाथ में है? जब चाहे शरीर छोड़ सकते हैं? क्या हमारे हाथ में है कि हम हृष्ट-पुष्ट शरीर में अच्छी बुद्धि को लेकर जन्म लें? क्या मनचाही संतान उत्पन्न करना हमारे हाथ में है? कई माता-पिता चाहते हैं कि लड़कियाँ ना आएँ पर उनकी लाइन लग जाती है। क्या हम अपनी मर्जी अनुसार आयु पा सकते हैं? क्या हम उम्र भर रोग, शोक, चिन्ता से मुक्त रहने का दावा कर सकते हैं? जब हमारे हाथ में कुछ भी नहीं तो विचार कीजिये, हम अधीन हुए या अधिकारी? परिस्थितियों के मालिक हुए या गुलाम? रात को सोना चाहें तो नींद नहीं आती, सुबह जागना चाहें तो आँख नहीं खुलती। मन को इस दिशा में ले जाना चाहें तो उस दिशा में जाता है। जहाँ से हटाना चाहते हैं वहाँ से हटता नहीं है। जहाँ लगाना चाहते हैं वहाँ लगता नहीं है तो हम मालिक हुए या गुलाम? बाह्य जगत तो भीतर से ही प्रकट होता है, जब भीतर अफरा-तफरी है, अनियंत्रण है तो बाहरी जगत में शान्ति और स्थिरता कैसे हो सकती है?

साधन बन बैठे मालिक

सुख-चैन पाने के लिए हमने साधन बनाए पर हम अपने ही बनाए साधनों के बंधन में बँध गए। वो चलने के बजाय, मालिक बन हमें चलाने लगे। सुख की मृगतृष्णा में इन साधनों ने हमारे आत्मबल को कैद कर लिया। हमने कारें बनाई, खरीदी इसलिए कि जल्दी पहुँचेंगे पर बड़े शहरों में कारों की भीड़ ऐसी बढ़ी कि शायद साइकिल पर होते तो जल्दी पहुँचते। कार में बैठे-बैठे, ट्रैफिक में फँसे हम, तेज गति से आगे बढ़ गए साइकिल सवार को अपने से ज्यादा खुशहाल और स्वतंत्र समझते हैं। कार से तेज चलने वाले हवाई जहाज बनाए पर वहाँ भी ट्रैफिक जाम होने लगा। आसमान में रास्ता साफ होने पर ही हमारे प्लेन का नंबर लगेगा, तब तक खड़े रहिए। फिर प्लेन पहुँचता है सुबह, हमारा कार्य है शाम को लेकिन हमें तो सुबह ही पहुँचना होगा, शाम तक इंतज़ार में बैठना होगा। हवाई जहाज समय से बँधा है और हम हवाई जहाज से बँधे हैं। इस समस्या से बचने के लिए चार्टर्ड प्लेन खरीदा गया पर वह भी उड़ेगा तो हवाई अड्डे से ही, जब उसे रास्ता साफ मिलेगा तब।

कंट्रोलिंग के अभाव में रूलिंग पावर कहाँ

क्या शुद्ध खान-पान हमारे हाथ में है? हम कैसा अन्न खा रहे हैं, कैसी ऑक्सीजन ले रहे हैं, कैसा पानी पी रहे हैं? क्या ये सब हमारी मर्जी के मुताबिक शुद्ध हैं, क्या दवाइयाँ शुद्ध हैं? हम चाहते हैं, कानून प्रभावी हो। हम देवी-देवताओं और भगवान से कृपा, दया, क्षमा की भीख माँगते रहते हैं। हमारी मनोवृत्ति में भिखारीपन है तो उचित कानून बनाने, उसे लागू करने जैसा अधिकारीपन का भाव कहाँ जागेगा? जब कंट्रोलिंग पावर नहीं तो रूलिंग पावर कहाँ से आयेगी? माता-पिता कहते, बच्चे कंट्रोल में नहीं, मालिक कहता, श्रमिक कंट्रोल में नहीं, पति-पत्नी

एक-दूसरे के नियंत्रण से बाहर हो जाने की शिकायत करते, सरकार कहती, हमारे सांसद, विधायक कंट्रोल में नहीं, लालच में लुढ़क जाते हैं तो फिर रूलिंग पावर कैसे आए?

मुक्तेश्वर हैं परमात्मा

इन सारी पराधीनताओं से मुक्ति पाने का सरल उपाय परमात्मा ने बताया है। जैसे जब कोई चारों तरफ से कीचड़ में फँस जाए तो उसे आगे-पीछे भागने से कोई लाभ नहीं होता क्योंकि चारों तरफ कीचड़ ही कीचड़ है। बाढ़ में फँसे व्यक्ति का भी यही हाल होता है। ऐसे में एयर लिफ्टिंग काम करती है। एयर लिफ्टिंग अर्थात् हेलीकॉप्टर से व्यक्ति को ऊपर उठा लिया जाता है। परमात्मा पिता भी इसी युक्ति से हमें मुक्त करते हैं। **वे स्वयं ऊपर परमधाम से सृष्टि पर आते हैं और हमें भी, देह में रहते भी, देह से परे परमधाम जाने की युक्ति सिखाते हैं। इस विश्व में तो चारों तरफ विकारों की ही दलदल है, सुरक्षा के लिए कहाँ जाएँ? परमात्मा पिता कहते हैं, अशरीरी बनो। यह शरीर जड़ है। पाँच तत्वों से बना है। जल, वायु, अग्नि, पृथ्वी, आकाश – इन पाँचों तत्वों में न बोलने की, न सुनने की, न देखने की, न सोचने की, न अनुभव करने की शक्ति है। ये सब शक्तियाँ तो आत्मा की हैं। आत्मा ही इस जड़ शरीर की रचनाकार है। इसको चलाने वाली और नियंत्रण करने वाली है, इसकी मालिक है। तो मालिक बनकर इसे कार्य में लगाए और फिर न्यारी हो जाए। सारा दिन इसी में क्यों बैठी रहे, इससे क्यों चिपकी रहे? इसी के चिन्तन में क्यों मशगूल रहे? जैसे ड्राइवर कार से यात्रा पूरी कर, सीट से उतरकर खुली हवा में स्वतंत्रता का अनुभव करता है, इसी प्रकार आत्मा भी कार्य को पूरा कर, शरीर की जकड़ को ढीला कर अपने घर परमधाम की ओर उड़ जाए। परमात्मा पिता का घर ही उसका घर है जहाँ चारों ओर शान्ति और पवित्रता का वास है। जहाँ उसे परमात्मा का पावन संग मिलता है। परमात्मा का प्यार, दुलार, पुचकार मिलती है। उसकी आत्मिक शक्ति की वृद्धि होती है। पार्ट बजाने में जो शक्ति खर्च हुई, उसकी भरपाई होती है। परमात्मा रूप पारस से संग करके उसके पिछले जन्मों के पाप भी धुलते हैं। परम सुन्दर परमात्मा को निहारकर उसकी सुन्दरता की प्यास बुझती है, प्यार के सागर में डुबकी लगाने से प्रेम की प्यास तृप्त होती है। आत्मा की सर्व सतोगुणी चाहनाएँ परमधाम में परमात्मा के संग से पूरी होती हैं। वह भरपूर होकर पुनः प्रकृति के बने शरीर में अपनी सीट पर साक्षीद्रष्टा बन विराजमान होती है जिससे कर्म करते भी उसके लेप-क्षेप से न्यारी रह आनन्दित रहती है। जैसे जेल में तो अधिकारीगण भी रहते हैं पर वे साक्षी होते हैं, स्वतंत्र होते हैं, इसी प्रकार अधिकारी और साक्षीपन की स्थिति में स्थित आत्मा इस प्रकृति के पिंजरे में रहते भी स्वतंत्र जैसा ही अनुभव करती है।**

– ब्र.कु. आत्म प्रकाश

ग्लोबल हॉस्पिटल में महत्त्वपूर्ण चिकित्सा सर्जरी कार्यक्रमों की जानकारी

घुटने व कूल्हे के जोड़ प्रत्यारोपण सर्जरी सुविधा
(Regular Knee and Hip Replacement Surgery)
दिनांक : 18 से 21 फरवरी, 2010
सर्जरी : डॉ. नारायण खण्डेलवाल, मुम्बई से कुशल व अनुभवी सर्जन
(Trained in U.K., Australia and Germany)
पूर्व जाँच के लिये केवल घुटने व कूल्हे के ऑपरेशन के इच्छुक रोगी संपर्क करें –
डॉ. मुरलीधर शर्मा, ग्लोबल हॉस्पिटल, फोन नं. 09413240131
फोन नं. : (02974) 238347/48/49 **फैक्स** : 238570
ई-मेल : ghrcabu@gmail.com
वेबसाइट : www.ghrc-abu.com

प्रश्न हमारे, उत्तर आपके

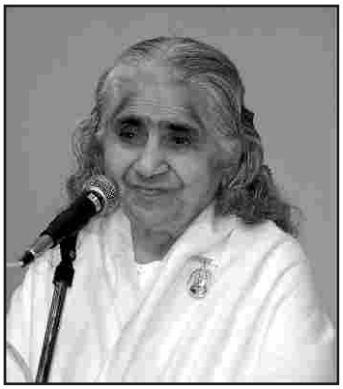

दिव्यबुद्धि के वरदान से विभूषित आदरणीया दादी जानकी जी, हर प्रकार के प्रश्नों के उत्तर देकर आत्मा को संतोष से भर देती हैं। बुद्धिवानों की बुद्धि बाबा ने उन्हें ऐसी कला प्रदान की है कि वे उलझे कर्मों की गुत्थियाँ सुलझाकर समाधानस्वरूप बना देती हैं। प्रस्तुत हैं भाई-बहनों द्वारा पूछे गए प्रश्नों के दादी जानकी द्वारा दिये गये उत्तर ... – सम्पादक

प्रश्न : क्या सभी का मन और विवेक एक जैसा है?

उत्तर : बुद्धि सबको है, विवेक *(Conscience)* सबको है, मन सबको है पर मन किसी का क्या सोचता है, किसी का क्या सोचता है। बुद्धि के पास गलत-ठीक समझने की योग्यता है। जब हम सोचते हैं तो विवेक अंदर से कहता है, क्या तुम सही सोच रहे हो? विवेक कहता है, राइट सोच, रांग मत सोच लेकिन बुद्धि इतनी मारी हुई है जो राइट नहीं करती है। कई ऐसे होते हैं जो अपने विवेक का खून कर देते हैं या उसे दबा देते हैं। उस घड़ी पता नहीं चलता कि मैं क्या करता हूं। कोई घड़ी आती है तो विवेक चुनौती भी देता है।

प्रश्न : कोई शरीर छोड़ता है तो उस समय हमारी स्थिति कैसी हो?

उत्तर : कोई भी शरीर छोड़ता है तो हम दुख नहीं करते हैं। जब तक वह बीमार है, हम प्रेम से सेवा करते हैं। ऐसा शांति का वातावरण बनाते हैं जो उसके दिल को शांति मिले। इतना प्रेम दें जो उसे दुख की फिलिंग ना आये। वह शरीर छोड़ता है तो भी हम शांति और प्रेम का वातावरण बनाये रखें। यह सच्चा प्यार है। यदि मोह के कारण दुख का वातावरण बनाते हैं, यह अज्ञानता है। कोई शरीर छोड़कर गया और मास भर, वर्ष भर दुखी होते रहें, रोते रहें, यह खराब है। नाम लेते ही रोना आ जाये, कोई कहे तो भी रोना आ जाये, इस रोने को जीतने के लिए थोड़ी बहादुरी चाहिए। जिसने शरीर छोड़ा उसे शांति और प्रेम के वायब्रेशन मिलें। मेरे साथ जो और संबंधी रहते हैं, उन्हें भी शांति और प्रेम के वायब्रेशन मिलें। जानते हैं, शरीर तो हरेक को कोई न कोई कारण से छोड़ना ही है। अपने कर्म का अच्छा यादगार छोड़ना चाहिये।

प्रश्न : हमारे अच्छे या बुरे कर्मों का हमारे नजदीकी संबंधियों, जिनसे हमारा प्यार है, पर क्या असर होगा?

उत्तर : हमारे अच्छे कर्मों का अच्छा प्रभाव, जिनके संग में हम रहते हैं, जिनके नजदीक जाते हैं, उन पर पड़ता है। अगर बुरा कर्म करूँगी तो दूसरों पर बुरा प्रभाव पड़ेगा, इस बात का ध्यान रखो। सुबह उठने से रात्रि सोने तक जो भी कर्म करेंगे, उन सबका दूसरों पर प्रभाव पड़ता है। उसके लिए मातेश्वरी ने एक शिक्षा दी थी। मैंने कहा, मम्मा, मेरे लिए कोई एक धारणा की बात सुना दो। वैसे तो बहुत बातें सुनी थीं उनसे पर उस समय मैंने एक ही बात पूछी थी। उन्होंने कहा, हर घड़ी यह सोचो कि तुम जो भी कर रही हो, सारा जहान देख रहा है। पहले मैं सोचती थी, भगवान मुझे देख रहा है परंतु मम्मा ने कहा, दुनिया भी तुम्हें देख रही है। इससे खबरदारी अच्छी हो जाती है।

प्रश्न : कई बार पता नहीं पड़ता, कर्म क्या है और फल क्या है। कोई गरीब है, पढ़ाई नहीं पढ़ी है तो मैनर्स ठीक नहीं हैं। तो क्या हम कह सकते हैं कि खराब मैनर्स हैं, उस कारण उसे नौकरी नहीं मिलती या गरीबी के कारण वह आगे नहीं बढ़ता?

उत्तर : ऐसा नहीं है कि गरीब है तो एज्यूकेशन नहीं मिल सकती। कई

साहूकारों के बच्चे भी नहीं पढ़ते। कई बार गरीब को भी शिक्षा का मौका दिया जाता है लेकिन वह नहीं पढ़ता। जिसको भिखारी बनने की आदत होगी वह कभी पढ़ेगा नहीं। वो कहेगा, मेरे को तो पढ़ना ही नहीं है। इसमें साहूकारी, गरीबी की बात नहीं है। कई गरीब के बच्चे अच्छे पढ़ जाते हैं जबकि साहूकार के नहीं पढ़ते। दूसरों को तरस पड़ता है कि इस गरीब को पढ़ाना चाहिए। पढ़ाई के साथ मनुष्य के गुणों का भी आधार है। अगर पढ़ाई है और काम नहीं मिलता है तो अवश्य ही मैनर्स और गुण भी इसके कारण हो सकते हैं। सद्गुण मनुष्य के लिए बहुत बड़ी चीज़ है। भले राजा हो पर गुण ना हों तो वह किसी काम का नहीं। हम ऐसे कर्म करें जो हमारे में गुणों की बढ़ोतरी हो। गुण वाला कभी भूखा नहीं मर सकता। भले ही देखने में साधारण है पर गुणवान है तो प्यारा लगता है। कम से कम किसी को दुख तो नहीं देता, अहंकार तो नहीं है, गुस्सा तो नहीं करता तो वह अच्छा आदमी है। अगर किसी के पास बहुत धन है पर वह किसी को मदद नहीं करता तो वह किस काम का। यदि धन है तो सबको दो, अच्छी तरह से सुखी करो। जो औरों को देता है उसके पास अपने आप आता है।

प्रश्न : मनुष्य भगवान को क्यों भूला?

उत्तर : अज्ञानवश, अभिमानवश यह सोचकर कि मैं सब कुछ कर सकता हूँ, भगवान को भूल गया।

प्रश्न : भगवान ड्रामा के रचयिता हैं, वे ड्रामा को ऐसा क्यों नहीं बनाते कि आदमी सदा अच्छा ही रहे? ड्रामा के ज्ञान से क्या लाभ है?

उत्तर : ड्रामा माना जिसमें सुख-दुख, लाभ-हानि, हार-जीत सब कुछ हो। जो एक जैसा चले, उसे ड्रामा कैसे कहेंगे? ड्रामा का ज्ञान होने से सदा यह ध्यान रहता है कि मैं एक एक्टर के रूप में अपना रोल अच्छे से अच्छा प्ले करूँ। जिसके साथ ड्रामा में मेरा पार्ट है, उसमें मैं तेरे-मेरे का संघर्ष ना जोडूं। एक्टर माना एक्टर, उसे क्या-क्यों का क्वेश्चन नहीं उठता। पार्ट पूरा हुआ फिर आगे बढ़ना है। जो बीती उसका चिंतन नहीं करना है। वर्तमान में अच्छा पार्ट बजाना है, भविष्य अपने आप अच्छा हो जायेगा। ड्रामा का ज्ञान निश्चिन्त बनाता है। साक्षी बनकर अच्छा पार्ट बजाना है। यदि व्यर्थ संकल्प चलते हैं, किसी से टक्कर चलती है तो भगवान में संशय आता है, खुद में आत्मविश्वास नहीं बैठता है तथा अन्य आत्माओं के साथ पार्ट बजाने का ढंग नहीं आता है।

प्रश्न : चाहे मनुष्य के, चाहे प्रकृति के कर्मों में भगवान का क्या रोल (भूमिका) है?

उत्तर : मनुष्य के कर्मों का प्रकृति तथा वायुमण्डल पर असर होता है। मंदिर, मस्जिद, चर्च में जब प्रेयर होती है, उस समय का वायुमण्डल कुछ देर के लिए पवित्र और शक्तिशाली बन जाता है। जैसे यहाँ मधुबन में वायुमण्डल कितना प्रभाव डालता है। भगवान का रोल यह है कि जब हम उसको याद करते हैं, उसकी श्रीमत प्रमाण काम करते हैं तो वह मदद ज़रूर करता है। भगवान की मदद से हम प्रकृति को भी शुद्ध बना सकते हैं। मनुष्य के स्वभाव-संस्कार को भी चेंज कर सकते हैं। जो हम नहीं कर सकते, वो भगवान की मदद से कर सकते हैं।

एक बार मैंने एक संकल्प रखा कि मैं मानती हूँ कि भगवान बुद्धिवानों की बुद्धि है। मैंने भगवान को इस तरह से सामने रखकर अपनी बुद्धि को भी उसके सामने रखा और कहा, भगवान तुम मुझे ऐसी बुद्धि दो जो मेरी बुद्धि राइट काम करे। औरों की बुद्धि भी राइट काम करे, इस तरह से भगवान को याद करती रही। इसमें मुझे बहुत सफलता मिली है। आप मधुबन में अपनी बुद्धि को शांत कर बैठ जाते हैं और परिवर्तन की लगन लग जाती है, यह सब आपसे कौन करा रहा है? भगवान से मदद पाने का ढंग चाहिए। दुनिया में माता-पिता, भाई-बहन भी प्यार से नहीं रह सकते लेकिन मधुबन में हर धर्म, जाति वाला प्यार से आकर रहता है, यह सब कौन करा रहा है? एक भंडारे में दो लोग

इकट्ठा खाना बनाकर खा नहीं सकते। यहाँ सब एक ही भंडारे में खाते हैं, यह किसका रोल है, कौन करा रहा है? वह मिलाता है सबको। भगवान के रोल को समझा तो आपका रोल भी ऊँचा हो जायेगा। लोग कहते हैं, भगवान यह करता, वो करता, भगवान कहता, यह मैं नहीं करता, यह तुम करते हो। भगवान जो करता वह समझना होता है।

प्रश्न : क्या आँखें बंद करके योग करना गलत है?

उत्तर : चाहो तो आँखें बंद करो लेकिन कितनी देर बंद करेंगे? कई बार हम आँखें इसलिए बंद करते हैं कि सामने के दृश्य को देखना नहीं चाहते। आँखें बंद करने से सामने वाला भले नहीं दिखाई पड़े लेकिन दूर वाला या बीता हुआ अंदर ही अंदर बहुत दिखाई पड़ता होगा। आँखें बंद करने से नींद आने की संभावना भी है। इसलिए नेचुरल योगी बनने के लिए खुली आँखों से देखते हुए भी मत देखो। योग का अर्थ है, बुरी बातें न सुननी हैं, न देखनी हैं, न बोलनी हैं, तो अपने आप योगी बन जायेंगे। फालतू सोचने की नेचर नहीं होगी तो योगी बन जायेंगे। किसके नाम-रूप से हमारा कोई प्रयोजन नहीं है इसलिए आँखें खुली भी हों तो भी कोई बाधा नहीं है। हमारा काम है आत्मा को देखना। आँखें बंद करेंगे तो भी आत्मा (तीसरे नेत्र) से ही देखेंगे और आंखें खुली रखेंगे तो भी आत्मा (तीसरे नेत्र) से ही देखेंगे।

प्रश्न : क्या मन में संकल्प करना भी कर्म है या जब संकल्प को कर्म में लाया जाये तभी उसे कर्म माना जाये?

उत्तर : देखा जाता है कि संकल्प को चलने की थोड़ी छुट्टी देते हैं तो कर्म में आने के बिगर रह नहीं सकता। जब हम मेडिटेशन की गहराई में चले जाते हैं तो संकल्पों पर भी बहुत ध्यान रहता है। पूर्व में किये गये किसी कर्म के आधार पर ही हमें संकल्प आता है। वर्तमान में कोई उलटा या व्यर्थ कर्म करने का संकल्प आता है तो मैं संकल्प को ही थोड़ा अच्छी तरह से शुद्ध बनाऊँ तो मेरे लिए फायदा होगा।

प्रश्न : क्या कर्मों के आधार से परिवार में या किसी ग्रुप में या किसी देश में जन्म होता है? क्या जन्म का आधार कर्म है?

उत्तर : पूर्व के कर्मों के आधार पर ही जन्म होता है पर ज्ञान एक ऐसी चीज़ है जिससे रियलाइजेशन या समझ आ जाती है कि इसमें भी मेरा कल्याण है।

प्रश्न : मान लो हमने अपनी तरफ से तो शान्त रहने का प्रयास किया लेकिन दूसरों पर या वातावरण पर उसका अच्छा प्रभाव नहीं पड़ा तो क्या उसे सच्ची शान्ति कहेंगे?

उत्तर : शान्ति तीन प्रकार की है – 1.किसी से बात नहीं कर सकते तो उसे शान्ति नहीं कहते, उसे चुप रहना कहते हैं, ऐसे चुप रहने से कोई शांति का वातावरण नहीं बनेगा। वो शांति कोई शांति नहीं कहलायेगी। 2.वैराग की शांति, किसी के साथ संबंध रखना अच्छा नहीं लगता तो मैं शांत रहती हूँ, चुप रहती हूँ, एक से बात करती हूँ, एक से नहीं, यह शांति प्रेम वाली शांति नहीं है। 3.सच्ची शांति वह है जो शांति का वायुमण्डल बना दे। अगर कोई मेरे से नाराज़ भी है तो भी मैं उसके चेहरे पर मुस्कराहट ले आऊँ। अगर ज्ञान, प्रेम, आनंद को साथ लेकर हम शांति का दान करते हैं तो दूसरे की दुख, अशांति दूर कर सकते हैं। हमारे संकल्प, वचन, कर्म का क्या प्रभाव पड़ता है वह हमें जानना चाहिए। ऐसे नहीं, मुझे तो शांति में रहना है, योग में रहना है, मैं दूसरे की परवाह नहीं करूँ। जब हम कहते हैं कि शांति मेरे पास ऐसी हो जो विश्व में शांति फैलाये तो विश्व को सामने रखकर शांतस्वरूप बने हैं। सर्वशक्तिवान परमात्मा से हम सदा सच्चे रूप में शांत रहने की शक्ति खींच रहे हैं जिसके लिए कुछ सहन भी करना पड़ा पर फिर भी मेरे पास शांति की शक्ति है। कोई मेरे से नाराज़गी से भी चलता है तो भी मेरे पास प्रेमभाव की शक्ति है। अगर दिल बड़ी है तो हम ईर्ष्या वाली आत्मा को भी खुश कर लेंगे। सच्ची दिल, खुली दिल, बड़ी दिल है तो हम शांति अच्छी फैला सकेंगे। ❖

'पत्र' संपादक के नाम

सितंबर 2009 का अंक पढ़ने के बाद जीवन को पलट देने वाला एक सुखद अनुभव हुआ। मुझे महसूस हुआ कि मैं अपना कल्याण कर औरों का कल्याण भी कर सकता हूँ। पूरे विश्व का तो नहीं कहूँगा लेकिन कम से कम स्वयं का और अपने परिवार का ज़रूर कल्याण कर सकता हूँ। 'सुखमय परिवार' लेख पढ़कर मुझे बहुत ही आनंद आया, इस को कम से कम 5-6 बार जरूर पढ़ा है जिसमें लिखा था –

1. वृद्ध का दिल कभी नहीं दुखाना चाहिए।
2. घर में नारी को सम्मान देना चाहिए, उसे अपने पैर की जूती नहीं समझना चाहिए।
3. एक-दूसरे की भावना को समझना चाहिए।
4. क्रोध का त्याग करना चाहिए।

ये चारों प्वाइंटस मुझे बहुत ही भाये। लेखक भाई एक से बढ़कर एक लेख लिखे, यही मैं परमपिता परमात्मा से प्रार्थना करता हूँ।

– ब्र.कु. संतोष वर्मा, तरपोगी

सितंबर अंक में रमेश भाई का लेख 'पुरुषोत्तम संगमयुग में कानून की मर्यादा और महिमा' बहुत अच्छा लगा। गुप्त दान महादान है। भंडारी व्यवस्था बापदादा की प्रेरणा से रखी, इस लेख में स्पष्ट हो गया। ज्ञानामृत ज्ञान का कलश है, मानव से महामानव बनाने के लिए यह अमृत है। इस के पान से रोग, शोक, क्लेश मिट जाते हैं। काँटों भरी ज़िन्दगी में सुख, शान्ति, आनन्द, प्रेम के फूल खिल जाते हैं। विश्व नवनिर्माण में इसका ज्ञान विमल है।

– ब्र.कु. अमर, मंदसौर

अगस्त अंक में 'कर्मों का साक्षात्कार' लघु नाटिका बहुत पसंद आई जिसे शब्दों द्वारा व्यक्त नहीं कर सकती हूँ। कर्मों की गुह्य गति न जानने के कारण आज मानव बुरे कर्म कर देते हैं, विनाशी धन के पीछे भाग-दौड़ करते भगवान को भी भूल जाते हैं। लेखिका बहन ने रत्नलाल सेठ का मिसाल देकर बहुत रमणीक तरीके से स्पष्ट किया है। उन्हें दिल से धन्यवाद समर्पण करती हूँ। इस लघु नाटिका को पढ़कर, जीवन में परिवर्तन लायें तो खुशी की बात है।

– ब्र.कु. रगिनी,
नवनगर (हुबली)

सितंबर 09 का लेख 'जीवन को प्रयोगशाला बनायें' बहुत ही मर्मस्पर्शी है। ऑटो सजेशन की विद्या जो लुप्त प्राय: हो रही थी, इस लेख द्वारा उसे जीवनदान, लोक हितार्थ मिला है। इस लोक मांगलिक कार्य के लिये लेखक भाई को अनेकानेक साधुवाद!

– के.पी.खरे, दमोह

ज्ञानामृत के संपादकीय लेख से मैं बहुत प्रभावित होता हूँ। हर लेख में कुछ न कुछ अमृत भरा होता है। सितंबर 09 के अंक में 'परमात्म शक्तियों और वरदानों की अनुभूति' लेख में अच्छा उदाहरण देकर समझाया गया है कि वरदानों का अनुभव करने के लिए दिल बहुत सच्चा-साफ चाहिए। अंदर एक, बाहर से दूसरा रूप नहीं। कथनी-करनी समान हो। याद अव्यभिचारी हो। एक बल एक भरोसा, इसी आधार पर चलते रहें।

– ब्र.कु. विजय, अमरावती

अक्टूबर 09 अंक में 'हिम्मते मर्दा, मददे खुदा' यह अप्रतिम दर्जे का सुपर लेख पढ़कर मन खुशी से भर गया। किसी भी प्रकार की समस्या आये तो शिव बाबा उसका निपटारा करते हैं। मन साफ तो मुराद हासिल। जो सच्चे दिल से याद करता है, बाबा उसकी मदद करते हैं। ऐसे लेख पढ़कर हर बच्चा मंज़िल तक पहुँच सकता है।

– ब्र.कु. लालाजी गोवेकर,
मेहकर

जहाँ करुणा, मैत्री और मुदिता की खेती होती है

• विनोद कुमार सिंह, पूर्व प्राचार्य, जे.पी. विश्वविद्यालय, छपरा

पुण्यों के उदय होने से आबू पर्वत स्थित शिव बाबा की नगरी में जाने का अपूर्व सौभाग्य प्राप्त हुआ। कहते हैं, फारसी का प्रसिद्ध कवि फिरदौस जब कश्मीर गया तो उसके मुँह से अनायास निकला – 'गर फिरदौस बर रूए जमीं अस्त, हमीं अस्तो, हमीं अस्तो, हमीं अस्त' अर्थात् पृथ्वी पर कहीं स्वर्ग है तो यही है, यही है, यही है। मुझे यह कहने में तनिक भी संकोच नहीं हो रहा है कि **साधना की यदि कोई सर्वोत्तम पुण्य भूमि है तो वह माउंट आबू पर्वत स्थित प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय ही है।** हजारों लोग, और तनिक भी कोलाहल नहीं। चारों ओर शांति का वातावरण किंतु श्मशानी शांति नहीं, प्रसन्नता से आपूरित शांति। ऐसा सहज प्रसन्न वातावरण कम ही देखने में आता है। अक्सर भारतीय लोग चुप नहीं बैठते और खाने के वक्त भोज में तो उनका कोलाहल देखते ही बनता है। सौ आदमियों के भोज में भी झांव-झांव, कांव-कांव बनी रहती है। बाबा की नगरी में हज़ारों आदमी रोज़ खाते हैं किंतु सूई भी गिरे तो सुनाई पड़े।

'राजयोग एवं अध्यात्म का, शोध की उत्कृष्टता में योगदान' विषयक सम्मेलन में भाग लेने हम वहाँ पहुँचे थे। आध्यात्मिकता क्या है, इस पर चाहे जितने विवाद हों, आध्यात्मिक होने के लिये प्रभु में विश्वास करने की अनिवार्यता मानें या न मानें परन्तु इस बात पर लगभग सबकी सहमति निर्विवाद है कि हृदय को प्रेम-सागर में डुबोये बिना आध्यात्मिक नहीं हुआ जा सकता। प्रेम की आंच हमारे ठोस और ठस मन को पिघला देती है, मन विकसित हो जाता है, सुगंधमय हो जाता है। इसीलिए शास्त्रों में कहा गया है – 'प्रेम से बड़ा कोई पुरुषार्थ नहीं है।' करुणा, मैत्री और मुदिता अध्यात्म रूपी बीज के फल हैं। इस फल के आस्वादन से मानव मन कृतार्थ हो जाता है और इस फल की बड़े सहज भाव से बाबा की नगरी में खेती होती है। बाबा की नगरी की हवा लगते ही मनुष्य की उपाधियाँ झड़ने लगती हैं, उसकी नाम-रूपात्मकता निरर्थक होने लगती है। मनुष्य देह से परे आरोहण करता हुआ वहाँ पहुँच जाता है जहाँ वह शुद्ध आत्मा रह जाता है।

राजयोग की साधना इस नगरी की सिफ़त (विशेषता) है, न केवल इसलिए कि राजयोग के रास्ते पर उंगली पकड़कर चलाने वाले लोगों की यहाँ कमी नहीं है बल्कि इसलिए भी कि यह पूरा स्थान ही 'बोधिवृक्ष' के नीचे अवस्थित लगता है। न आँखें मूंदो, न कान रुँधो – सहज भाव से संसार को निहारते हुए, सबमें आत्मा को देखने के अलावा राजयोग है क्या? हम सब एक हैं, एक ही परमपिता के पुत्र हैं – इस भाव से मैत्री का जो स्फोट (विस्तार) होता है, प्रेम की जो सुगंध फैलती है उसी के अभाव में तो संसार हिंसा का आगार बना हुआ है। बुद्धि के स्तर पर यह जानते हुए भी कि हम क्षण-क्षण मृत्यु के मुख की ओर बढ़ रहे हैं – हृदय के स्तर पर अनुभव न कर पाने के कारण हम अहंकार में डूबे हैं, हाय-हाय मचा रहे हैं, एक-दूसरे की टाँगें खींच रहे हैं, दूसरों के दुख में सुख का अनुभव करते हैं और सुख बटोरने की ईहा के पीछे नाचते हुए, दुखों के गहन गर्त में डूब रहे हैं। हमारी दृष्टि उलटी हो गई है, हम समृद्धि बटोरना चाहते हैं, अपने दुखों को दूर करना नहीं चाहते। समृद्धि को अपनी मुट्ठी में बंद करने की इच्छा इसलिए नकारात्मक और घातक है कि समृद्धि दूसरों की कीमत पर ही बटोरी जा सकती है।

इहलोक का यदि कोई एक उद्देश्य हो सकता है तो वह है मानव समाज को स्वस्थ, सुंदर और गतिशील बनाना। हम जैसे लोगों को लगता है कि बाबा की नगरी, समाज को ऐसा बनाने के लिए कृतसंकल्प-सी है। हमने पाँच दिन ज्ञान सरोवर में गोते लगाये। यों तो हमें वहाँ तमाम लोग याद आते रहते हैं किंतु दादी जी, निर्वैर भाई जी, छाया बहन, बनारसी भाई आदि की याद कुछ ज़्यादा ही

आती है।

माउंट आबू का अपना ऐतिहासिक महत्त्व भी है। कहते हैं, यहाँ के स्पर्श मात्र से लोहा सोना बन जाता है। आदि अवधूत दत्तात्रेय की यह साधना-स्थली रही है। भूतकाल का स्मरण न भी करें और शुद्ध अनाध्यात्मिक मिज़ाज से भी सोचें तो यहाँ का ग्लोबल हॉस्पिटल अपने आप में अनूठा है। स्वच्छता का अर्थ समझना हो तो कोई यहाँ आ भर जाये, समझ जायेगा। अक्सर अस्पतालों में जाने से मन घबराता है, स्वस्थ लोग भी बीमार हो जाते हैं किंतु ग्लोबल हॉस्पिटल में प्रवेश करने मात्र से बीमार की आधी बीमारी दूर हो जाती है। जीवंतता के साथ शांति का कैसा सह-अस्तित्व है, वह यहाँ प्रवेश कीजिए और समझ जाइएगा। कुछ वर्षों पूर्व आचार्य राममूर्ति ने हमसे इस अस्पताल को देखने का आग्रह किया था। यहाँ आने पर उनके आग्रह का अर्थ समझ पाया।

आज के जमाने में जीवन इतना जटिल होता जा रहा है कि स्नेह का सुधा-मार्ग कहीं खो-सा गया है और मानव मन निरर्थक उछल-कूद करता हुआ लहूलुहान हो रहा है। माउंट आबू का ईश्वरीय विश्व विद्यालय उसे ऋजु (सरल) बनाने का महत्त्वपूर्ण मंत्र प्रदान करता है। ज्ञान सरोवर में बार-बार अवगाहन करने की इच्छा होती है। ❖

राजयोग से अष्ट शक्तियों की प्राप्ति

जयशंकर मिश्र 'सव्यसाची', सह-संपादक, 'योग संदेश', हरिद्वार

आत्मा का शरीर में रहना ही जीवन है और आत्मा का शरीर से अलग होना ही मृत्यु है। आत्मा अविनाशी है, आत्मा का रूप अणु से भी सूक्ष्म है। ज्योतिस्वरूप आत्मा की शक्ति बहुत है। आत्मा भृकुटी के बीच निवास करती है। माया में फँसकर जीव अपने वास्तविक मूलस्वरूप को भूलकर काम, क्रोध, लोभ और मोह के दलदल में फँस जाता है। लेकिन अपने समस्त मैल एवं पापों का परिमार्जन कर अपने मूल स्वरूप में प्रतिष्ठित होना ही 'योग' है। परमात्मा के प्रेम में खो जाना ही 'योग' है।

'योग' संसार त्याग नहीं वरन् संसार के प्रति आसक्ति का त्याग है। गीता के भगवान का कथन है – शुद्ध, संयमी, जितेन्द्रिय, कर्मफल की चिन्ता न करने वाला आत्मा ही योगी कहलाता है। योग के प्रणेता भगवान शिव हैं।

वर्तमान परिदृश्य में 'योग' पूरे विश्व की आवश्यकता है। लौकिक और पारलौकिक दोनों जीवन के लिए योग की समान महत्ता है। योग एक ऐसी पूंजी है जो हमें ईश्वरीय विरासत में मिली है। योग एक अनुशासन है। योग जाति, धर्म, संप्रदाय, लिंग, आयु सभी से परे है।

राजयोग के अभ्यास से अविनाशी सुख-शान्ति की प्राप्ति तो होती ही है, साथ-साथ कई आध्यात्मिक शक्तियाँ भी आ जाती हैं, जैसे, सिकोड़ने और फैलाने की शक्ति। राजयोगी जब चाहे अपनी कर्मेन्द्रियों के द्वारा कर्म करता है और जब चाहे इनसे न्यारा हो जाता है। 'समेटने की शक्ति' से राजयोगी जब चाहता है, मन को लौकिक दुनिया से समेट कर घर परमधाम चलने के लिए तैयार रहता है।

'सहनशक्ति' से योगी अपकार करने वालों के प्रति भी शुभ भावना रखता है। 'समाने की शक्ति' से उसमें अवगुणों को न देख गुणों को देखने और धारण करने की शक्ति आ जाती है।

'परखने की शक्ति' से योगी किसी भी मनुष्य के संपर्क में आने से ही उसके गुण, स्वभाव, कर्म को परख लेता है। योगी को 'निर्णय शक्ति' स्वत: प्राप्त हो जाती है। योगी विपरीत परिस्थितियों का सामना भी अविचल रूप से कर लेता है। 'सहयोग की शक्ति' से वह तन, मन और धन से ईश्वरीय सेवा करते हुए सांसारिक लोगों का भी सहयोगी बनकर रहता है। इस तरह योग से जीवात्मा का परमात्मा से मिलन होता है और परमात्मा से शक्तियाँ भी प्राप्त होती हैं। ❖

परिस्थिति – वरदान या अभिशाप

• ब्रह्माकुमार नरेश, मुजफ्फरनगर

कोई भी ऐसा बाह्य कारण जो मनुष्यात्मा की योग्यता, सामर्थ्य या शक्ति के स्वाभाविक प्रदर्शन में रुकावट पैदा करके उसे निर्धारित कर्म करने से रोके या लक्ष्य की तरफ बढ़ने से रोके, उसे विघ्न, अड़चन, बाधा, विपत्ति या परिस्थिति कहा जा सकता है। 'पर' को नियंत्रित करने की कोशिश (सूखा, बाढ़, महामारी, हिंसक पशु आदि) या 'पर' से नियंत्रित होने की मजबूरी (दुर्गम स्थान पर स्थानान्तरण, डॉक्टरी इलाज, ट्रेन का कई घंटे लेट होना इत्यादि) 'परिस्थिति' के रूप में सामने आती है। हाँ, यदि 'स्व' (मौलिक गुण-शक्तियाँ) से नियंत्रित होने की कला आ जाये, तो परिस्थिति एक रुकावट न होकर आत्म-सशक्तिकरण का आधार बन सकती है। **यदि जीवन में परिस्थितियाँ न आएँ तो बिना संघर्ष का जीवन नीरस व वनस्पति के समान *(Vegetative Life)* हो जाये व मनुष्य की आत्मा में अन्तर्निहित मौलिक शक्तियों का कोई उपयोग ही नहीं हो पाये।**

गुण-शक्तियों का विकास

सतयुग में जब परिस्थितियाँ नहीं होती थीं तो कर्म गुणों के आधार से होते थे परन्तु जब परिस्थितियों के युग आए तो कर्म शक्तियों के आधार से होने लगे। कहा भी जाता है कि सतयुग में देवी-देवता सर्वगुण संपन्न थे, न कि सर्वशक्ति संपन्न। सतयुग में गुण प्रखर होते हैं जबकि कलियुग अन्त में शक्तियाँ प्रखर होती हैं। परन्तु चल रहे पुरुषोत्तम संगमयुग की यह विशेषता है कि परमात्म सान्निध्य प्राप्त कर लेने वाले भाग्यशाली मनुष्यात्माओं में गुण व शक्तियाँ दोनों ही प्रकट-प्रखर हो जाते हैं। हालांकि सात मौलिक गुणों में एक गुण शक्ति भी है जिसमें अष्ट शक्तियाँ समाई हुई हैं। शक्तियों का प्रयोग परिस्थिति के आने पर ही होता है। परिस्थितियों के मार्ग से गुज़र कर ही सफलता प्राप्त होती है और देवी-देवता सफलतामूर्त थे। सफलता प्राप्त करने में जितनी ज़्यादा परिस्थितियाँ आती हैं, उस सफलता के फल में उतनी ही ज़्यादा मिठास व पौष्टिकता होती है।

परिस्थितियाँ देती हैं महानता

सृष्टि व इस पर पल रहे विभिन्न प्राणियों के शाश्वत, अनादि अस्तित्व का आधार है 'परिवर्तन का नियम' जो कि एक कुदरती व्यवस्था के अंतर्गत 'समयबद्ध व नियमबद्ध' तरीके से कार्य करता रहता है। उसकी अविरत-सतत् गति से तालमेल बिठाने में पिछड़ गये मनुष्य 'परिस्थिति' का सामना करते हैं। जितने भी महापुरुष हुए हैं, वे अपमानकारी व निराशाजनक परिस्थितियों से गुज़र कर ही सफल हुए हैं। उन्होंने परिस्थितियों से पलायन न करके उनका डटकर मुकाबला किया। वे अपनी आस्था, लगन व आत्मिक शक्ति के बल पर डटे रहे, डिगे नहीं और सहन किया।

एक बार स्वामी विवेकानन्द के पीछे बन्दर पड़ गये। विवेकानन्द को भागता देख एक बुजुर्ग व्यक्ति ने आवाज़ लगाई कि ठहर जाओ और बन्दरों की आँखों में देखो। विवेकानन्द ने वैसा ही किया। फिर जब वह बन्दरों की तरफ बढ़े तो बन्दर पीछे भागने लगे। परिस्थितियाँ भी बन्दर के समान हैं। स्वामी रामतीर्थ के अनुसार, **''इस जगत में आप कभी ऐसी स्थिति में अपने को नहीं पा सकते जब बाहर से कोई विघ्न ना पड़े, आप चाहे हिमालय पर चले जाओ।''** मोहनदास करमचन्द गांधी ने दक्षिण अफ्रीका में परिस्थितियों का सामना किया तो उनका परिवर्तन 'महात्मा गांधी' के रूप में हो गया। सिस्टर टेरेसा ने शुरूआत में परिस्थितियों का सामना किया तो उनका परिवर्तन अनाथ बच्चों की मदर के रूप में हो गया और वह 'मदर टेरेसा' के नाम से इतिहास में अमर हो गई। यहाँ तक कि महाराणा प्रताप के घोड़े चेतक ने जब हर परिस्थिति में अपने मालिक

का साथ निभाया तो वह आज तक भी अपने नाम से जाना जाता है।

मानव और पशु पर परिस्थिति का प्रभाव

परिस्थिति अर्थात् किसी वजह से मन अति गतिशील होकर संकल्प-विकल्प में फँस जाए और शरीर से कर्म न किया जाये। दैवी विधान तो यह है कि मन शान्त, स्थिर व अचल स्थिति में रहे और शरीर सदा कर्मण्य या गतिशील रहे। इससे परिवर्तन के नियम से तालमेल बैठ जाता है और परिस्थिति पैदा नहीं होती। विकासवाद *(History of Evolution)* हमें सन्देश देता है कि 'आगे बढ़ो या मरो' *(Move or Die)*। जो आगे नहीं बढ़ता है, परिवर्तन की प्रक्रिया से तालमेल नहीं बैठाता है या परिस्थिति का शिकार नहीं करता है, वह परिस्थिति का शिकार होता है। ऐसा मनुष्य सुस्ती, शिथिलता व जड़ता धारण किये हुए होता है। जड़ता का नियम *(Law of Inertia)* अचैतन्य भौतिक पदार्थों पर काम करता है और यदि यह नियम किसी मनुष्य पर भी काम करने लगे तो उस 'जड़-बुद्धि' के जीवन में परिस्थितियाँ तो आयेंगी ही।

नुकसानकारक है अति महत्वाकांक्षा

इस सृष्टि पर यदि अन्य प्राणियों की अपेक्षा मानव को सर्वाधिक परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है तो उसका कारण है मनुष्य का अति महत्वाकांक्षी होना, प्रकृति व प्रकृति के नियमों से छेड़छाड़ करना, आपसी प्रतिस्पर्धा या आगे निकलने की होड़, आध्यात्मिक ज्ञान का अभाव, भौतिकवादी जीवन और 'परिवर्तन का नियम'। इस साकार सृष्टि पर हर पल परिवर्तन की प्रक्रिया चल रही है जो कभी भी रुक नहीं सकती। पशु परिवर्तन के नियम को सहज भाव से स्वीकार करते हैं अत: उन्हें परिस्थिति विरले ही परेशान करती है जबकि मनुष्य परिवर्तन के नियम को रोकना चाहता है और यह परिस्थिति के आने का कारण बन जाता है। मिसाल के तौर पर मनुष्य गर्मी के मौसम में लू से मर जाते हैं और सर्दी के मौसम में ठंड से मर जाते हैं परन्तु पशु गर्मी या ठंड के संबंध में मानव से अधिक सहनशील होते हैं। मनुष्य ने एयर कंडीशनर का आविष्कार कर डाला जो यदि बिजली के गुम हो जाने से न चले तो मनुष्य के लिए गंभीर परिस्थिति पैदा हो जाती है। पशु बढ़ती उम्र से रत्ती भर भी परेशान नहीं होते जबकि आज मनुष्य के लिए बुढ़ापा एक शारीरिक अवस्था नहीं बल्कि परिस्थिति के समान है। किसी का पुराना मकान गिर जाये तो यह एक गंभीर परिस्थिति है परन्तु पशु, आंधी-तूफान से नष्ट हो गये विश्राम स्थल को भूलकर फौरन नया स्थान तलाश लेते हैं। पक्षी भी पुराने पेड़ के गिर जाने से नष्ट हो गये घोंसले को भूल, दूसरे पेड़ पर नये घोंसले के निर्माण में जुट जाते हैं। यहाँ तक कि चींटी भी मिठाई की डली को ले जाने में चाहे 50 बार असफल हो, परन्तु वह परिस्थिति की परवाह नहीं करती चाहे उसे 100 चींटियों की मदद लेनी पड़े।

मेहनत का दर्द मुस्कराता है

मनुष्य विषम परिस्थितियों की दुहाई देते रहते हैं, उन्हें आभास ही नहीं है कि पाँच विकारों रूपी रावण की जेल में आजीवन कारागार की जो सज़ा वे भोग रहे हैं, वही परिस्थितियों का कारण है। जब तक आत्मा पर विकारों की जंग *(Rust)* है, तब तक परिस्थितियों से जंग *(War)* है। बिगड़ी चीज़ को सुधारना, उसका परिवर्तन करना कहलाता है। **आज जन-साधारण के संस्कार बिगड़ गये हैं और उन्हें सही करने की प्रक्रिया को पुरुषार्थ कहा जाता है। पुरुषार्थ में मेहनत है और मेहनत का दर्द मुस्कराता है। जो पुरुषार्थी या साधक जितनी ज़्यादा परिस्थितियों का सामना सफलतापूर्वक करता है, वह उतनी ही उच्च कोटि की आध्यात्मिक कमाई करता जाता है। पुरुषार्थी एक मँजा हुआ माँझी होता है जो परिस्थितियों के दरिया में आशा की नाव पर सवार रहता है और साहस के पतवार से आगे बढ़ता जाता है। पुरुषार्थी वह, जो धारा का प्रवाह मोड़ दे, दुर्भाग्य की रेखायें मिटा दे।**

मुश्किल परिस्थिति कराती है दुर्लभ प्राप्ति

परिस्थिति दुर्बल मनुष्य पर शासन करती है परन्तु एक आध्यात्मिक पुरुषार्थी के लिए यह आगे बढ़ने का साधन बनती है। जितनी विषम परिस्थिति होगी, उतना ही वह पुरुषार्थी को मजबूत बनाती है। परन्तु यह भी हो सकता है कि बार-बार की परिस्थितियों से घबरा कर एक साधक अपनी साधना को तिलांजलि दे दे। अत: एक साधक को यह बात गहराई से समझ में आ जानी चाहिए कि **'दुर्लभ प्राप्ति के मार्ग में असाधारण विघ्न आने ही हैं जो वास्तव में साधना में बल भरने का काम करते हैं।'** शुरूआत में एक साधक को सांसारिक बातें ही हिला देती हैं। यदि वह इन पर जीत पा ले तो वह संसार को हिला सकता है। विश्व इतिहास गवाह है कि असाधारण उपलब्धियों को प्राप्त करने वाले महान व्यक्तियों ने असाधारण बाधायें पार की थीं। साधक को कुछ आध्यात्मिक नियमों की समझ होनी चाहिए, जो हैं – **लक्ष्य की स्मृति सदा बनी रहे, उमंग-उत्साह कम न हो, हर बात में कल्याण है चाहे वह कितनी भी दुखदायी बात क्यों न हो, हर परिस्थिति किसी न किसी पुराने हिसाब-किताब को चुक्तू करती है, बड़ी परिस्थिति इस बात का प्रमाणपत्र है कि साधक की साधना उच्च स्थिति को प्राप्त कर रही है।** कहावत भी है कि माया रुस्तम से रुस्तम बनकर लड़ती है। रुस्तम वह, जो भीषण परिस्थितियों व नुकसान में भी शान से मुस्कराता हुआ आगे बढ़ता रहे।

गौतम बुद्ध का जब जन्म हुआ तो उनके पिता राजा शुद्धोदन को ज्योतिषियों ने बतलाया कि यह बच्चा या तो चक्रवर्ती सम्राट होगा या पक्का संन्यासी। संन्यास से बचाने के लिए गौतम का लालन-पालन कई सुन्दर नारियों के बीच, महलों में किया गया। उसे किसी बूढ़े व्यक्ति के कभी दर्शन नहीं होने दिये गये और यह भी पता नहीं चलने दिया गया कि हर किसी को मृत्यु भी आती है। बुद्ध जब युवावस्था में आए तो पहली बार, नगर में हो रहे युवक महोत्सव में भाग लेने के लिए रथ से निकले। रास्ते में एक बूढ़े को देख ठिठक गये और सारथी से पूछा कि यह कौन है। सारथी द्वारा यह बताये जाने पर कि एक दिन सभी की यही हालत होती है और फिर उसकी मृत्यु भी होती है, बुद्ध गंभीर चिन्ता में डूब गये और वापस लौट आये। उन्हें जीवन में पहली बार किसी परिस्थिति का पता पड़ा और एक ही झटके में उनके अन्दर पूरा परिवर्तन अर्थात् वैराग्य आ गया। परिस्थिति मनुष्य में पहले चिन्ता लाती है, फिर चिन्तन, फिर वैराग्य और फिर परिवर्तन, जिसकी मिसाल बुद्ध हैं।

बनिए श्रेष्ठ 'कर्मवादी'

परिस्थिति के आने पर भिन्न-भिन्न मनुष्य अपनी योग्यता, सामर्थ्य व शक्तियों के भिन्न-भिन्न स्तर के अनुरूप भिन्न-भिन्न स्थिति धारण करते हैं। परिस्थिति के आने पर एक 'पलायनवादी' भाग खड़ा होता है और जीवन में कोई उन्नति नहीं कर पाता। एक 'दुर्भाग्यवादी' अपने दुर्भाग्य का रोना लेकर बैठ जाता है। एक 'भाग्यवादी' कर्म के बजाय भाग्य या किस्मत पर भरोसा कर बैठा रहता है। वह कहेगा कि ड्रामा में होगा तो खुद ही प्राप्त हो जायेगा। 'समझौतावादी' परिस्थिति का मुकाबला करने की बजाय बीच का रास्ता निकालता है और समझौता कर उसी में संतुष्टता का अनुभव करता है। एक 'अवसरवादी' यह देखता है कि कैसे काया को कम से कम कष्ट देकर भी अधिकतम लाभ कमाया जाये या कैसे परिस्थिति का सामना किसी और से कराया जाए और उसका लाभ खुद ले लिया जाये। उसे दूसरे के कंधे पर बंदूक रखने में महारत हासिल होती है। **परन्तु एक श्रेष्ठ 'कर्मवादी' कर्म के द्वारा भाग्य बनाने में विश्वास रखता है और परिस्थिति का डट कर मुकाबला करता है। यदि वह असफल भी होता है तो मन छोटा नहीं करता और अपने प्रयास का विश्लेषण करके आगे के लिए इसमें सुधार करता है।**

(क्रमशः)

पुरुषोत्तम संगमयुग और विश्व परिवर्तन में विविध प्रकार के गृहयुद्धों का योगदान

• ब्रह्माकुमार रमेश शाह, गामदेवी (मुंबई)

संगमयुग का अर्थ ही है कि इस युग में परमपिता परमात्मा का दिव्य अवतरण होता है तथा विश्व परिवर्तन का श्रेष्ठ कार्य होता है अर्थात् पुराने कल्प का अंत और नये कल्प की आदि होती है। यह विश्व परिवर्तन का साक्षात्कार सबसे पहले शिव पिता परमात्मा ने ब्रह्मा बाबा को कराया कि कैसे विनाश के समय पर खून की नदियाँ बहेंगी और बाद में नये कल्प की शुरूआत होगी जिसमें देवी-देवता संपन्न समाज होगा और यह भी बताया कि कुदरती आपत्तियाँ, अंतर्राष्ट्रीय युद्ध और गृहयुद्धों के द्वारा विनाश का कार्य पूर्ण होगा।

जहाँ तक कुदरती आपत्ति का सवाल है, उसके बारे में दुनिया चिंतित है क्योंकि कई जगह पर अकाल, अतिवृष्टि, भूचाल तथा बहुत ही गर्मी हो रही है। उत्तरी ध्रुव व दक्षिणी ध्रुव में जो पानी बर्फ के रूप में है, वह पिघल रहा है। हिमालय की हिम नदियों का, पानी में रूपांतरण हो रहा है लगभग डेढ़ कि.मी. तक। इसके साथ-साथ अनेक प्रकार के उद्योगों के द्वारा जो कार्बन गैस हवा को प्रदूषित करती है, उसके बारे में भी कोपनहेगन जैसे स्थानों पर 12 दिनों की कांफ्रेंस हुई जिसमें पंद्रह हज़ार से भी अधिक प्रतिनिधि हाज़िर रहे। प्रदूषण की मात्रा इतनी बड़ी है कि उसके बारे में कहा जाता है कि चीन प्रतिवर्ष 601.8 करोड़ टन कार्बन डाइऑक्साइड *(Co_2)* हवा में छोड़कर प्रदूषण करता है। दूसरे नंबर पर 590.3 करोड़ टन कार्बन डाइऑक्साइड *(Co_2)* अमेरिका छोड़ता है। इसलिए जो उद्योगगृह Co_2 कम छोड़ते हैं अर्थात् जिनके पास Carbon credit होती है, उनसे Co_2 ज्यादा छोड़ने वाले उद्योग यह credit खरीदी करते हैं। राजस्थान की एक कंपनी ने कार्बन क्रेडिट बेचकर पिछले सात वर्षों में 500 करोड़ रुपये की कमाई की है। इस प्रकार प्रकृति के पाँच तत्वों के साथ-साथ यह Co_2 के द्वारा जो वायुमंडल प्रदूषित होगा, उसका भी विश्व परिवर्तन के कार्य में बहुत बड़ा योगदान है।

अनेक देशों ने अणु बम बनाने का कारोबार शुरू किया है। भारत, पाकिस्तान जैसे बड़े देशों के साथ-साथ इजराइल जैसे छोटे देश भी अणु बम बनाने के क्षेत्र में आगे हैं और वर्तमान समय भारत में सबके मन में यह प्रश्न है कि अगर पाकिस्तान में जो आतंकवादी कार्य कर रहे हैं, वे सत्ता पर आ जाएँ या उनके हाथों में अणु बम आ जाएँ तो भारत के कई मुख्य शहरों पर उसे वे फेंक सकते हैं। सन् 1945 में हिरोशिमा और नागासाकी के ऊपर अमेरिका ने बम गिराये थे, उनसे कई गुणा ज्यादा शक्तिशाली अणुबम अब दुनिया के अनेक देशों के पास स्टॉक में तैयार हैं।

अभी थोड़े समय पहले एक रिपोर्ट अखबारों में छपी थी कि वर्तमान समय 40 स्थानों पर धर्म तथा आर्थिक बातों के नाम पर युद्ध चल रहा है। गृह युद्ध रूपी यह तीसरा शस्त्र विश्व परिवर्तन में बहुत बड़ा कार्य कर सकता है क्योंकि अणु युद्ध के बाद अणु बम के विस्फोट के कारण जो भी प्रदूषण होता है, उसका प्रभाव काफी लंबे समय तक रहता है। हिरोशिमा के ऊपर जो अणुबम गिरा उससे लाखों लोग मर गये परंतु सन् 1974 में भी हिरोशिमा में अणुबम के रेडियोएक्टिव के दूषित प्रभाव से 100 से भी अधिक मर गए तथा कई बीमारी सहन करते रहे क्योंकि स्वर्ग की स्थापना भारत में होने वाली है तो अणु युद्ध का प्रभाव भारत पर ज़्यादा नहीं हो सकता और इसीलिए भारत में गृहयुद्ध और प्राकृतिक आपदाओं का प्रभाव ज़्यादा होगा क्योंकि यह सृष्टि रूपी नाटक अविरत *(without*

break) चलता रहता है।

भारत में नक्सलवाद गृहयुद्धों के निमित्त बहुत बड़ा कारण है। नक्सलवाद सन् 1950 में बिहार और बंगाल राज्य में वहाँ के ज़मींदारों के अत्याचारों के कारण शुरू हुआ। पश्चिम बंगाल के दार्जिलिंग ज़िले में नक्सलवारी नाम के एक गाँव से यह गृहयुद्ध शुरू हुआ और तब से ही अखबारों में गृहयुद्ध के बदले नक्सलवाद नाम प्रसिद्ध हुआ। शुरू में तो वे किसान और भूमिहीन कार्यकर्त्ता तीर-धनुष और तलवार लेकर युद्ध के लिए निकले। सन् 1950 में जो गृहयुद्ध शुरू हुआ, वह सन् 1967 तक दक्षिण भारत में कोकाकुलम आदि स्थानों तक पहुँच गया और आज तो यह नक्सलवाद बिहार, उड़ीसा, झारखंड, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र और आंध्रप्रदेश आदि राज्यों में भी फैल गया है। नक्सलवादी कार्यकर्त्ता पुलिस स्टेशन पर हमला करते हैं और पुलिसकर्मियों के शस्त्र उठाकर ले जाते हैं। गरीबों को न्याय दिलाने के लिए खुद ही जन अदालत का कार्य करते हैं और उनके समक्ष पुलिस एवं सरकारी कर्मचारियों को अपराधी के मुआफिक उपस्थित होना पड़ता है।

इन नक्सलवादी आतंकवादियों ने आर्थिक एवं औद्योगिक गृहों को निशाना बनाया है। रेलवे व टेलिफोन लाइन, विभिन्न पावर प्लांट्स तथा ग्रामीण सड़क निर्माण योजना, सिंचाई योजना आदि स्थानों पर भी ये लोग हमला करते हैं। सन् 2008 में 106 बार और 2009 के पहले छह मास में 56 स्थानों पर इन्होंने हमला किया था। अब तक इन्होंने 10,500 नागरिकों की हत्या की है।

इन आतंकवादियों को चीन के द्वारा धन और शस्त्रों की पूर्ण रूप से मदद मिल रही है और अब तो उनके पास ए.के. 47 मशीनगन, हाथ बम, सुरंग आदि करोड़ों रुपयों की युद्ध सामग्री है। इनकी गुप्त सुरंगों के ऊपर जब पुलिस गाड़ी जाती है तो बम फटने से पुलिसकर्मी मरते या घायल हो जाते हैं। ट्रेनों की पटरी उखाड़ ली जाती है और अनेक प्रकार के हमले इन आतंकवादियों ने कराए हैं। थोड़े समय पहले ही इन्होंने एक ट्रेन को कब्जे में लेकर अपहरण किया। अपने प्रभावित क्षेत्रों में ये आतंकवादी समानांतर सरकार चलाते हैं और वहाँ के व्यापारियों, उद्योगपतियों, ठेकेदारों, राजकर्मियों तथा विद्यालयों के संचालकों आदि से हफ़्ता वसूली करते हैं। इस प्रकार से ये संपूर्ण शस्त्रधारी आतंकवादी बहुत तीव्रगति से अपना कार्य फैला रहे हैं।

भारत सरकार ने पिछले 40 वर्षों से अब तक आतंकवादियों के साथ प्रेमपूर्वक बात करने का कारोबार रखा था, इससे नक्सलवादियों को बढ़ावा मिला है। वर्तमान गृहमंत्री ने ही पहली बार आतंकवादियों के साथ बात करने के स्थान पर सामना करने के लिए लश्कर तथा हवाई दल भेजने का निर्णय किया है। इन नक्सलवादियों ने भारत सरकार को भी चुनौती दी है। सन् 2000 में देश के 10 राज्यों के 68 ज़िलों में नक्सलवाद था, वही सन् 2008 में 20 राज्यों के 175 ज़िलों में और अब सन् 2009 में 231 ज़िलों में फैल चुका है। ये आतंकवादी बहुत ही क्रूर होते हैं। संगठन को छोड़ने या गद्दारी करने का प्रयत्न करने वाले का सिर काटकर बीच रास्ते में लटका दिया जाता है। पुलिस रिपोर्ट के मुताबिक पिछले एक वर्ष में 69 नक्सलवादियों का सिर काटकर लटकाया गया।

दैवी परिवार के एक दिवंगत सदस्य, जो व्यापारी मंडल के उपप्रमुख थे, को नक्सलवादी पकड़कर जंगल में ले गये। उन्हें व्यापार मंडल के सदस्यों की लिस्ट दी गई तथा प्रत्येक से निश्चित धनराशि इकट्ठी करने के लिए कहा गया। साथ ही धमकी भी दी कि निर्धारित समय तक काम नहीं हुआ तो हत्या कर दी जायेगी। सरकार ने उस दैवी भ्राता की मदद नहीं की और उन्हें धनराशि इकट्ठी कर नक्सलवादियों के दरबार में जाकर देनी पड़ी। अपने कई सेवाकेन्द्रों पर भी ये आतंकवादी आ गए हैं पर अपनी बहनों को परेशान नहीं किया है।

वर्तमान में भारत सरकार ने तीन माओवादी नेताओं की धरपकड़ की तब उन नक्सलवादियों ने सरकार के खुफिया विभाग के पुलिस इंस्पेक्टर फ्रांसीस इंदिवर का अपहरण किया और मांग रखी कि पहले इन तीन माओवादी नेताओं को छोड़ो तो हम फ्रांसीस इंदिवर को छोड़ेंगे। भारत सरकार ने माओवादी नेताओं को छोड़ा नहीं, परिणामरूप इंदीवर अफसर की हत्या कर दी गई।

पूर्व गृहमंत्रियों को भ्रम था कि आतंकवादियों के पास सिर्फ तीर, धनुष और तलवार ही हैं, वह भ्रम अभी दूर हुआ है और सरकार को प्रतीत हो गया है कि नक्सलवादियों के पास चीन के द्वारा दिये गये अत्यंत आधुनिक शस्त्र मौजूद है। इसलिए भारत सरकार ने अभी कमांडों की सेना तैयार करना शुरू किया है। नेपाल में तो ये माओवादी, साम्यवादी सरकार बहुत आगे बढ़ गई है। नेपाल में सदियों से चली आ रही राजाशाही खत्म हो गई है और साम्यवादी नेता भ्राता प्रचंड थोड़े समय के लिए नेपाल के पंतप्रधान भी बने। नेपाल एक समय पर विश्व का एकमात्र हिन्दू राज्य था जहाँ हिन्दू राजाओं का राज था। वहाँ अभी प्रजातंत्र तथा साम्यवादी विचारधारा वाले राज्य कर रहे हैं। पाकिस्तान में भी तालिबान आतंकवादियों का कई जगह राज्य चल रहा है। वहाँ की सरकार भी ऐसे आतंकवादियों से बहुत डरती है। पड़ोसी देश बर्मा अर्थात् म्यांमार में भी लश्कर द्वारा राज्य कारोबार है। श्रीलंका में भी उग्रवादियों का कारोबार बहुत समय से चल रहा था वह अभी थोड़ा ठंडा हुआ है। इस प्रकार से दुनिया के कई देशों में गृहयुद्ध विभिन्न रूप में फैल रहा है और एक दिन अचानक ही उनके द्वारा क्रांति होगी। चीन में भी कई सालों तक माओसेतुंग जैसे साम्यवादी नेताओं ने क्रांति की और चांगकाई सेक जैसे पूंजीपति की सरकार को, चीन की मुख्य धरती से दूर कर अपना राज्य कारोबार प्रस्थापित किया। वर्तमान में साम्यवाद रशिया से दूर हुआ है परंतु चीन में तो अपने स्वरूप का साम्यवाद हिंसक रूप में फैला हुआ है और उन्होंने तिब्बत के ऊपर अपना अधिकार जमा लिया है और अभी-अभी अमेरिका के राष्ट्रपति ओबामा ने अपनी चीन यात्रा के दरमियान ऐलान किया कि तिब्बत चीन की ही संपत्ति है। इस प्रकार हिंदुस्तान के चारों ओर बाहर से आतंकवाद तथा अंदर से नक्सलवाद हिंसक रूप धारण कर रहा है। इससे सिद्ध होता है कि भारत में विश्व परिवर्तन के कार्य में गृहयुद्ध-आतंकवाद का कारोबार अधिक होगा। साथ-साथ भ्रष्टाचार भी सब जगह फैल गया है। भारत के एक राज्य के मुख्यमंत्री पर दो साल में 4,000 करोड़ रुपया इकट्ठा करने का आरोप लगा है। इसी तरह कई सांसदों ने सांसद बनने के बाद भ्रष्टाचार से जो पैसा इकट्ठा किया है, उसका इतिहास अखबारों में आया ही था।

अखबारों में छपी बातों के आधार पर लिखे इस लेख का यही उद्देश्य है कि हमारे दैवी परिवार के सदस्यों को विभिन्न प्रकार के गृहयुद्धों आदि के प्रति सावधानी मिले जिसके आधार पर अपने कारोबार में भी सावधान रहें तथा हमारे प्यारे शिव बाबा समय की जो सावधानी दे रहे हैं, उसे स्वीकार करके पुरुषार्थ में तीव्रता लायें। वर्तमान सीजन की अव्यक्त मुरलियों में अव्यक्त बापदादा से श्रीमत मिली है कि हमें उड़ती कला का पुरुषार्थ करना चाहिए और सावधानी को वास्तविक स्वरूप देकर सतयुगी सृष्टि में श्रेष्ठ पद पाने का पुरुषार्थ करना चाहिए। याद रहे, अब नहीं तो कब नहीं। फिर से मैं यह बात सभी पाठकगण के लिए दोहराना चाहता हूँ कि सारे विश्व में आम और भारत में खास जो गृहयुद्ध की तैयारियाँ हो रही हैं, इस बात को नज़रअंदाज़ न करें अर्थात् इसकी उपेक्षा न करें क्योंकि थोड़े समय बाद यह कटु सत्य वास्तविकता बन जायेगा। ❖

खुश रहना अर्थात्
मन और तन को शक्तिशाली
टॉनिक प्रदान करना

मुझे फादर मिल गया

• बीजू जॉन जेकब, जबलपुर

मेरा जन्म क्रिश्चियन परिवार में हुआ। तीन भाइयों में सबसे बड़ा हूँ। बचपन से ही मेरा स्वभाव अन्तर्मुखी व धार्मिक था। बाइबिल पढ़ना व चर्च की सभी गतिविधियों में निरंतर शामिल होना मेरी आदत थी। यह सब करते भी मुझे अंदर से एक खालीपन महसूस होता था कि मैंने भगवान को नहीं जाना। चर्च के फादर से कई प्रश्न पूछता रहता था जिनमें मुख्य यह था कि बाइबिल में लिखी बातों को व्यवहार में लाने का सहज रास्ता क्या है? ईसा मसीह दुआ करते थे – *'Our Father who Art in Heaven.'* इसका मतलब कोई पिता है जो सबसे ऊँचा है लेकिन उसके बारे में कुछ बताया नहीं जाता था।

बुरे समय में सब दूरी बना लेते हैं

मेरे जीवन में एक खराब समय आया जब मैं बी.एस.सी. प्रथम वर्ष में फेल हो गया। घर में बहुत तनाव था। मैंने सारे लोगों से रिश्ता तोड़ दिया, स्वयं को खोजना शुरू किया और अपनी कमियों को पहचान कर दूर करने में लग गया। इसी दौरान मैंने अनेक दार्शनिकों, धर्मस्थापकों की किताबों को भी पढ़ना चालू किया और ट्रांसेंडेन्टल मेडिटेशन *(Transcendental Meditation)* का अभ्यास भी शुरू किया।

जैसे-जैसे इस प्रकार के अभ्यास में आगे बढ़ता गया, मुझमें स्वयं को और उस परमसत्ता को जानने की ललक बढ़ती गई। मुझे कुछ सवालों के जवाब तो मिले पर पूरी तरह संतुष्ट नहीं हुआ। इसी दौरान ग्रेजुएशन कर सरकारी नौकरी प्राप्त की और मेरा विवाह भी हो गया। विवाह के एक साल बाद सन् 1996 में मैं गंभीर रूप से बीमार पड़ गया। इन चार महीनों में बिस्तर पर पड़े रहने के दौरान मुझे अनुभव हुआ कि बुरे वक्त में शरीर के रिश्ते-नाते भी दूरी बना लेते हैं या परिस्थितिवश साथ नहीं दे पाते। मैंने मन ही मन उस अनजान भगवान से वायदा किया कि अगर मैं ठीक हो गया तो नौकरी और आवश्यक कार्यों के बाद बचे हुए समय को आपकी सेवा में लगाऊँगा।

शरीर ठीक हुआ तो मैं फिर भगवान को खोजने लगा। दिसंबर, 1999 में ब्रह्माकुमारी आश्रम की ओर से एक आध्यात्मिक चित्र प्रदर्शनी लगाई गई। प्रदर्शनी के दो चित्रों ने मुझे बहुत प्रभावित किया। पहला चित्र था जिसमें सारे धर्मों के पिता के रूप में ज्योतिस्वरूप को दिखाया गया था और दूसरा था, भगवान के गुणों को दर्शाता हुआ ज्योतिस्वरूप का चित्र।

जीवन में सकारात्मक परिवर्तन

मैंने साप्ताहिक कोर्स किया। मेरे अंदर जो भी प्रश्न थे, बिना पूछे ही उनके उत्तर मुझे कोर्स के द्वारा मिल गये। मन शान्त हो गया और जीवन में सकारात्मक परिवर्तन भी जल्दी होने लगा। खान-पान की शुद्धि आदि ईश्वरीय नियमों के पालन में मुझे, ईश्वरीय सहायता के कारण बहुत कम मेहनत लगी। नियमित क्लास करने लगा और सन् 2001 में प्यारे बाबा से मिलने आबू गया। उसके बाद हर वर्ष एक या दो बार आबू जाता हूँ व बाबा की जो भी सेवा मिलती है उसमें सहयोग करता हूँ। वर्तमान में जबलपुर मौसम कार्यालय में कार्यरत हूँ। अपने ऑफिस के साथियों और दोस्तों को भी बाबा का ज्ञान देता हूँ। मेरे परिवार में सभी ने साप्ताहिक कोर्स किया है, सब ईश्वरीय कार्य में सहयोगी हैं। मेरा एक भाई मुंबई में चर्च का फादर है, उसने भी कोर्स किया है। **इस समय मैं योग के विभिन्न आयामों का जीवन में प्रयोग कर रहा हूँ। मेरा ध्यान अपने पुराने संस्कारों को योग द्वारा मिटाने पर निरंतर रहता है। मेरी आश है कि मेरे चारों ओर के लोग बाबा को पहचानें और इसके लिए मैं निमित्त भी बनना चाहता हूँ।** ❖

अब मैं चिन्तामुक्त हूँ

• गुरमीत सिंह, जिला जेल, सिरसा

सिरसा जेल में सजा काट रहे गुरमीत सिंह का अनुभव बहुत सुंदर है। जेल में रहते हुए भी वो प्यारे शिवबाबा की याद में इस कदर मस्त है कि उसे जेल में रहकर सजा काटने जैसी कोई महसूसता नहीं है। अति संघर्षमय जीवन की दुखदायी घटनाओं के बादल आज ऐसे छँट गये हैं जैसे कि वे कभी थे ही नहीं। ज़िंदगी में अपने तथा पराये लोगों से मिले दुखद व्यवहार की पीड़ा समाप्त हो गई है। ये सब संभव हो पाया है जेल में मिले ईश्वरीय ज्ञान और राजयोग के अभ्यास से। एक साक्षात्कार में वे व्यक्त कर रहे हैं राजयोग से हुई प्राप्तियाँ... – ब्रह्माकुमारी बिन्दु

प्रश्न : आप कब से ब्रह्माकुमारी बहनों द्वारा ईश्वरीय ज्ञान श्रवण कर रहे हैं?

उत्तर : पिछले दो वर्षों से जेल में लगातार चल रही मुरली क्लास मैं सुन रहा हूँ और अब तो कभी-कभी, जब किसी कारण से ब्रह्माकुमारी बहनें नहीं आ पातीं तो मैं ही बाकी सब कैदियों को मुरली पढ़कर सुनाता हूँ। मुरली अब तो मेरे जीवन का श्वास बन गई है।

प्रश्न : अपने गुज़रे हुए कल के बारे में कुछ बताएं, उस समय आपकी मानसिकता कैसी थी और आज आप क्या महसूस करते हैं?

उत्तर : पारिवारिक झमेले और आर्थिक तंगी की वजह से यूं तो मैं बचपन से ही बहुत पीड़ा में जीता रहा हूँ। मेरे पिता जी का स्वभाव अति गुस्सैल होने के कारण मुझे बहुत कुछ सहना पड़ा। हर समय अपनी बहनों की शादी और अन्य पारिवारिक कार्यों की चिंता में न जाने कैसे-कैसे संकल्प मन में आते रहते थे। पिछले कुछ वर्षों से तो मुझे संघर्ष की अति से गुज़रना पड़ा। एक दिन किसी व्यक्ति से मेरा और मेरे परममित्र का झगड़ा सीमा पार कर गया और हम दोनों (मैं और मेरे मित्र) को जेल हो गई। जेल में आया तो यहाँ मैंने श्वेत वस्त्रधारी बहनों को देखा, मुझे लगा, ये तो कोई अलौकिक फ़रिश्ते हैं। मैंने रोज़ाना राजयोग की क्लास में बैठना शुरू किया। फिर तो मेरा दिल-दिमाग बिल्कुल हलका हो गया। बहुत सुख महसूस किया और इस ईश्वरीय ज्ञान को ही अपने जीवन का आधार बना लिया। मैंने दुनिया में अत्यंत दुख और भ्रष्टाचार देखा हुआ है इसलिए यहाँ जेल में रहते मुझे जेल जैसी कोई महसूसता नहीं होती बल्कि मुझे तो लगता है, अब मैं रावण की विकारी जेल से आजाद हो गया हूँ और मुझे यहाँ इस जेल में ईश्वर ने सेवार्थ भेजा है। अन्य कैदियों के व्यवहार की चिंता किए बगैर मैं जेल में सारा दिन किसी को कोर्स करवाता हूँ और किसी को प्यारे बाबा की मुरली सुनाता हूँ। बहनों के आने से पहले मैं अपने क्लासरूम में झाड़ू इत्यादि लगाकर उसे साफ करता हूँ और जो समय बचता है उसमें राजयोग का अभ्यास करता हूँ। जब भी मैं जेल से कुछ दिनों के लिए अपने गाँव छुट्टी पर जाता हूँ तो वहाँ सेवाकेन्द्र की निमित्त बहनों के सहयोग से आध्यात्मिक कोर्स तथा अन्य प्रवचनों इत्यादि के कार्यक्रम चलते हैं।

प्रश्न : जेल में रहते आपको अपने परिवार की चिन्ता नहीं होती?

उत्तर : पहले होती थी लेकिन अब मैंने सब कुछ अपने प्यारे शिव बाबा पर छोड़ दिया है। मुझे अंदर से यह पूर्ण निश्चय है कि प्यारे शिव बाबा ही मुझे तथा मेरे परिवार को संभालने वाले हैं और आने वाले समय में भी जो उनको उचित लगेगा वो ही मेरे साथ होगा। इसलिए अब मैं बिल्कुल चिंतामुक्त हूँ।

प्रश्न : राजयोग से सबका जीवन चिंतामुक्त, नशामुक्त होकर स्वच्छ बन जाए उसके लिए आपकी क्या योजना है?

उत्तर : वैसे तो मेरे गाँव में ईश्वरीय ज्ञान का साप्ताहिक कोर्स हो चुका है और कुछ लोग संस्था के प्रति

निष्ठावान भी बने हैं। लेकिन अब जेल से छूटते ही सर्वप्रथम मेरे गाँव में एक ब्रह्माकुमारीज़ पाठशाला बने और उसमें सभी भाई-बहनें ब्रह्माकुमारी बहनों से ईश्वरीय ज्ञान सुनें, यही मेरा प्रयास होगा। आदरणीया दीदियाँ समय प्रति समय मुझे इस सेवा के लिए प्रेरित करती रहती हैं और सहयोग भी देती हैं। मैं जब भी उनसे मिलता हूँ तो मुझे लगता नहीं कि मैं कोई कैदी या एक सामान्य-सा व्यक्ति हूँ। मेरे प्रति उनके स्नेह और व्यवहार से मुझे लगता है कि मैं भी इसी अलौकिक परिवार का ही सदस्य हूँ और ब्रह्माकुमार ही मेरी पहचान है। ❖

शिवरात्रि पर लीजिए..पृष्ठ 2 का शेष

और लक्ष्य की सिद्धि होगी।

हम शिव के पास जायें कैसे?

प्रश्न उठता है कि परमात्मा शिव के पास हम जायें कैसे और उनसे वरदान कैसे लें? शिव परमात्मा तो अशरीरी हैं। अत: मालूम रहे कि उनके पास बिन पग अर्थात् पाँव बिना ही जाना होता है और बिन कर अर्थात् हाथों के बिना ही उस दाता से लेना होता है। आप कहेंगे कि पाँव के बिना भला हम उसके पास कैसे जायेंगे और हाथों के बिना उससे कैसे वरदान लेंगे?

देखो, शरीर के पास शरीर से जाना होता है और जिसका शरीर ही न हो उसके पास बिना शरीर के जाना होता है। अत: पहले तो आप देह-अभिमान छोड़ो अर्थात् यह भूलो कि आप देह हो और यह याद करो कि आप 'आत्मा' हो। आत्मिक नाते से ही आपका शिव परमात्मा के साथ संबंध है, इसी नाते से ही आपका उनसे मिलना होगा। अत: आत्मा के स्वरूप में स्थित होवो। परमात्मा के पास जाने का साधन तो मन ही है। अत: मन रूपी पाँव से शिव बाबा के पास जाओ और बुद्धि रूपी हाथों द्वारा उनसे वरदान लो। मन से तो आप बहुत तीव्र गति से जा सकते हैं।

आप पूछेंगे कि मन द्वारा कैसे जायें? देखो, वैसे भी संसार में जिसके साथ स्नेह होता है, उसके बारे में मनुष्य कहता है कि 'मेरा मन तो उसके पास है। मेरा तन भले ही यहाँ है परंतु मन तो वहाँ लगा रहता है।' तो जबकि शिव परमात्मा से हमारा स्नेह है तो हमारा तन यहाँ रहते हुए भी मन वहाँ जा सकता है।

हम शिव से वरदान कैसे लें?

अब हमें यह तो मालूम है ही कि सूर्य और तारागण से भी पार जो परमधाम, परलोक, ब्रह्मलोक अथवा शिवलोक है जहाँ पर कि प्रकाश ही प्रकाश है, उसमें ज्योतिबिन्दु परमात्मा शिव वास करते हैं, तो सहज ही स्नेहपूर्ण रीति से हमारा मन वहाँ जाना चाहिए। वहाँ से ही तो हम सब इस संसार में आये हैं और वहाँ ही हम सभी को जाना भी है; अत: अब वहाँ ही हमें पहले मन से जाना चाहिए। संसार की भी यह रीति है कि जहाँ मनुष्य को जाना होता है पहले तो वहाँ उसका मन जाता है, पीछे वह स्वयं वहाँ पहुँचता है। तो अब जब हम मन की लगन शिव बाबा से लगायेंगे और बुद्धि द्वारा उसमें मगन हो जायेंगे तो इस स्नेह रूपी तार के द्वारा हमें उस सर्वशक्तिमान द्वारा शक्ति रूपी लाइट-माइट मिलेगी और हमारी बुद्धि के सभी भण्डारे भरपूर हो जायेंगे।

उस लाइट और माइट द्वारा ही हमारे विकर्म दग्ध होंगे और विकर्म दग्ध होने से ही हम मुक्ति को प्राप्त होंगे। अत: शिव के साथ मन से लगन लगाकर मगन हो जाना ही उस पापकटेश्वर से पाप काटने की सहायता लेना तथा उस मुक्तेश्वर से मुक्ति का वरदान पाना है। ❖

भगवान को बनाइये हमराज़

• ब्रह्माकुमारी उर्मिला, शान्तिवन

एक बार एक गृहिणी अपने दस वर्ष के पुत्र को कुछ लाने के लिए कह रही थी। पुत्र ने मना किया तो उसे गुस्सा आ गया और उसने पुत्र को पीठ पर थप्पड़ मार दिया (हो सकता है गुस्से की भूमिका पहले से बनी हुई हो)। लड़के ने अपमान महसूस किया और बदले में माँ पर जूता फेंक दिया। अब तो माँ भी आपे से बाहर हो गई और उसने इतनी ज़ोर से दो-तीन थप्पड़ मारे कि लड़का बुरी तरह चीखा और बदले में घर की चीज़ों की तरफ लपका पर माँ ने उसे कसकर पकड़ लिया। आधे घंटे में दोनों आंशिक रूप से सामान्य हो पाये। पूर्ण सामान्य होने में तो और भी ज़्यादा समय लगा होगा।

अनेक घरों में ये अनहोनियाँ घट जाती हैं, कारण? कारण यह है कि एकल परिवार है, छोटे-छोटे घर हैं। माता-पिता की सब तरह की बातों में छोटी उम्र के बच्चे साझेदार हो जाते हैं। सास-ननद, देवरानी, जेठानी – कोई भी बड़ी उम्र का व्यक्ति मन की लेन-देन करने के लिए होता नहीं है तो कई राज़ की बातें माँ, बच्चे को ही बता देती है और वह आठ या दस वर्ष का बच्चा घर की चिन्ताओं, घर के मित्र, शत्रुओं, माँ-बाप के पारस्परिक व्यवहारों, आमदनी, खर्चे आदि का हमराज़ हो जाता है। जब घर का कोई राज़ उससे छिपा नहीं है तो वह स्वयं को माँ-बाप के समकक्ष समझने लगता है, कम-से-कम 'बहुत छोटा हूँ' यह एहसास तो उसका गुम हो ही जाता है।

पिताजी से भी वह इकलौता लड़का 'यार, पापा' इस तरह के संबोधनों से बात करता है और पापा से पापा के साथ-साथ दोस्त जैसी बातें भी कर लेता है। पुराने जमाने में सोलह वर्ष के बच्चे को मित्रवत् माने जाने की सलाह दी गई थी (सोडषे तू मित्रवत्) परन्तु आजकल तो 'दस वर्षे तू मित्रवत्' अर्थात् दस वर्ष का बालक भी मित्रवत् व्यवहार चाहने लगा है। इस तरह, माँ-बाप के सामने बच्चा बनकर रहने की उसकी भावना आठ या दस वर्ष का होते-होते लुप्तप्रायः हो जाती है। कई बातों में वह राय देने लगता है और कई बार उसकी कोई राय मान ली जाती है तो उसके बड़प्पन को और मजबूती मिल जाती है।

अब ऐसे बच्चे को यदि माँ मारे तो उसके अहम् को भी चोट लगती है। उसका मन कहता है, तेरा कौन-सा राज़ मैं नहीं जानता, मेरे सहयोग बिना तुम्हारा कोई काम नहीं होता तो क्या मैं अब छोटा रह गया हूँ जो मार खाऊँ, मैं बड़ा हूँ, मारेगी तो उलटा मारूँगा, इस प्रकार की बराबरी की भावनायें उसमें जागती हैं और वह सहन करने, चुप रहने के बजाय उलटा हाथ उठा लेता है।

अब इस समस्या का समाधान क्या है? संयुक्त परिवारों में बच्चों को जो लंबा बचपन मिलता था, एकल परिवारों में वह छिनता जा रहा है। संयुक्त परिवार प्रणाली भी अब संभव नहीं है। बहुधा एक ही पुत्र होता है, नौकरी के कारण शहर में रहता है, माँ-बाप गाँव छोड़ना नहीं चाहते। और भी कई कारण हैं संयुक्त परिवार न रहने के। अभी उनकी चर्चा न करके, चर्चा का विषय यह है कि ऐसी माता और ऐसे पुत्र के बीच मिठास कैसे पैदा की जाये?

यहाँ आध्यात्मिकता हमारी सहयोगी बन सकती है। आध्यात्मिकता का अर्थ है, परमात्मा को अपने घर का एक सदस्य बना लेना। यह सदस्य ऐसा है जो ना तो घर के कार्यों में दख़लंदाज़ी करता है, न आपसे भोजन, कपड़े की सेवा माँगता है पर आपकी हर प्रकार की समस्या का व्यवहारिक समाधान करता है। आप अपने पुत्र को घर की समस्यायें सुनाकर उसका बचपन मत छीनिए, भगवान को हमराज़ बनाकर उसके आगे दिल खोलिये। राजयोग के अभ्यास द्वारा यह संभव है। आपका दिल हलका हो जायेगा, आपको मार्गदर्शन भी मिलेगा। आपका अकेलापन भी मिटेगा। जैसे ऐलोपेथी से थके लोग आयुर्वेद की

ओर लौट रहे हैं इसी प्रकार भौतिकता के रंग में रंगी जीवन पद्धति के नुकसानों से बचाव के लिए आध्यात्मिकता की ओर लौटना एक सही कदम है। आधुनिकता, बिना आध्यात्मिकता के सर्वस्व विनाश की ओर ले जायेगी। राजयोग सीखने के लिए आप अपने शहर के ब्रह्माकुमारी सेवाकेन्द्र पर जा सकते हैं, बहनें नि:शुल्क रूप से आपको थोड़े समय में ही सिखा देंगी। ❖

मैं अनाथ से सनाथ बन गया

ब्रह्माकुमार मो. नूर ईस्लाम, गुड़गाँव (कारागार)

मेरा जन्म सन् 1982 में दिल्ली के हजरत निजामुद्दीन में एक गरीब घर में हुआ। घर के सभी सदस्य – अम्मी, अब्बू तथा हम चारों भाई-बहनें पाँचों वक्त की नमाज़ पढ़ते थे और खुदा पर बहुत विश्वास रखते थे लेकिन अचानक अम्मी की कैंसर से मृत्यु हो जाने से तथा बहन की टी.बी. से मृत्यु हो जाने से पिताजी को सदमा लगा। वे नमाज़ी से शराबी बन गए। फिर उन्होंने दूसरी शादी कर ली। अब्बू की अनुपस्थिति में दूसरी अम्मी हमें खूब मारती थी। तंग होकर मेरा बड़ा भाई घर छोड़कर भाग गया। रह गये हम दो छोटे भाई। अब्बू की भी एक हादसे में मृत्यु हो गई। हमें उस कारण एक लाख पच्चीस हज़ार रुपये मिले। अम्मी ने उन रुपयों से फिर शादी कर ली। अब दोनों मिलकर हम दोनों भाइयों पर खूब अत्याचार करने लगे। फिर मैं भी अपने छोटे भाई को लेकर भाग गया।

मैं एक गाँव में कबाड़ी का धंधा करने लगा, छोटे भाई को स्कूल में डाला पर अम्मी हमें वहाँ से पकड़ ले गई, फिर अत्याचार शुरू हो गए। हम दोनों भाई फिर भागे और इसके बाद प्लाट खरीदने के चक्कर में मैं चोरी में फँस गया। जेल हो गई, छूटते ही फिर चोरी, मार-पीट की। अम्मी के प्रति बदले की आग तो थी ही, एक दिन रास्ते में उसे देखा तो उसके पैरों पर डंडे मार दिये, पुन: जेल हो गई। जेल में एक दिन देखा कि एक कोने में कुछ भाई ध्यानावस्था में बैठे हैं। उनमें से एक मेरे ब्लॉक का भी था। उसने बताया कि यहाँ सच्चा ज्ञान मिलता है। वहाँ भगवान के चित्र लगे थे। मन में आया कि वहाँ जाऊँ, पर फिर सोचा, मैं तो मुसलमान हूँ, ये तो मुझे भगा देंगे। मैंने उस भाई से कहा, मैं इनके साथ बैठना चाहता हूँ। उसके कहने पर अमरीश नाम रख लिया और वहाँ बैठ गया पर बाद में पता चला कि यहाँ कोई धर्म-भेद नहीं है। फिर मैंने लगन से साप्ताहिक कोर्स शुरू किया। सृष्टि के आदि-मध्य-अंत के बारे में जाना। कल्प वृक्ष के बारे में विस्तार से जाना। कर्मों की गुह्य गति को जाना। दरोगा भाई ने नशा छुड़वाया। अब मैं पूर्णरूपेण नशामुक्त हूँ। हर रोज बाबा की प्यार भरी मुरली सुनता हूँ तथा जीवन में पूरी तरह उतारता भी हूँ। कभी कोई ग़लती हो भी जाती है तो बाबा को बताता हूँ। **पहले मैं स्वयं को बहुत बुरा समझता था। अब बाबा ने मीठे बच्चे, मीठे बच्चे कहकर मुझे अच्छा बना दिया। अब दिल से यही आवाज़ आती है – 'जिसके साथ स्वयं भोलानाथ भगवान हो, वह अनाथ कैसे हो सकता है।'** हर रोज़ हम पंद्रह भाई ईश्वरीय महावाक्य सुनते हैं। बस, अब तो यही तमन्ना है कि विश्व परिवर्तन के इस महान कार्य में मैं बाबा का पूरा-पूरा सहयोगी बनूँ। दिन-रात बस यही दिल से निकलता है –

बिन तेरे बाबा मेरी ज़िन्दगी अलसाई थी,
पाकर तुझको, नई चेतना ने ली अंगड़ाई-सी।
तेरे प्यार की शीतल छाया में, बेहद का सुख पाया है।
प्यारे बाबा! तेरी यादों में परमानन्द समाया है।

वृत्ति नियन्त्रण के प्रयोग

• ब्रह्माकुमार हरिशंकर जोशी, बोरिवली पूर्व (मुंबई)

जिस प्रकार विज्ञान प्रयोग कर-करके किसी चीज़ की गुणवत्ता में सुधार करता जाता है, इसी प्रकार, अध्यात्म भी सूक्ष्म प्रयोगों के माध्यम से व्यक्ति की कमियों को निकाल उसके गुणों, शक्तियों में वृद्धि कर, उसे संपूर्णता की ओर ले जाता है। अन्तर इतना है कि विज्ञान के प्रयोग स्थूल आँखों से किसी को भी दिखाए जा सकते हैं परन्तु अध्यात्म के प्रयोग, केवल करने वाले को अनुभव होते हैं। हाँ, इन प्रयोगों से उसका जो गुणात्मक परिवर्तन होता है वह धीरे-धीरे ही समाज के सामने प्रत्यक्ष होता है परन्तु वह परिवर्तन होता है स्थायी ।

एक बार तीन नवयुवक महात्मा बुद्ध के पास आये। बुद्ध श्रावस्ती में साधकों को ब्रह्मचर्य की आवश्यकता पर समझाते हुए कह रहे थे कि ब्रह्मचर्य एक मुख्य साधना है। मुक्ति के लिए साधक का चित्त एकदम निर्मल और कामरहित होना ज़रूरी है। तब उन तीनों युवकों ने एकान्त में महात्मा बुद्ध से कहा, महाराज, आपका ज्ञान उत्तम से उत्तम है, हमें पूरा विश्वास है कि हम लक्ष्य भी पा जायेंगे लेकिन जैसे ही हम साधना में बैठते हैं तो काम वासना इतनी प्रबल हो उठती है कि हम साधना कर ही नहीं सकते। बुद्ध ने तीनों को अपने सामने बैठा कर वचन कहे कि काम की उत्पत्ति शरीर की आकृति और रूप के चिन्तन से आती है, यदि पुरुष है तो नारी का रूप तथा शरीर और नारी है तो पुरुष का रूप तथा शरीर। तब बुद्ध ने उन्हें एक प्रयोग करने को कहा और 15 दिन बाद पुनः मिलने को कहा। प्रयोग इस प्रकार था – **'जिस शरीर में आसक्ति जाये, उस शरीर को विचार शृंखला से टुकड़े-टुकड़े करो, अनुभव होगा कि उसमें रूप जैसी कोई चीज़ नहीं है। उसमें रुधिर, मांस तथा गंदगी के ढेर के सिवा कुछ नहीं दिखेगा। वह हड्डियों का एक ढांचा मात्र दिखेगा। बस, इसी का ध्यान करो तथा मन को कहो, क्या तुम्हें ऐसे घृणित, अनित्य शरीर की कामना है?'**

तीनों युवकों ने निष्ठा के साथ 15 दिनों तक साधना की। साधना के दौरान संयोग से एक सुन्दर नारी उस पथ पर से गुज़र रही थी। वह थोड़े-थोड़े समय तीनों साधकों की ओर देखकर, मुस्कराकर आगे बढ़ चली। इतने में उसका पति ढूँढते-ढूँढते वहाँ से गुज़रा। उसने पहले साधक से पूछा, क्या आपने कोई सुन्दर स्त्री यहाँ से जाते देखी? उसने जवाब दिया, हाँ, एक हड्डियों का ढांचा जा रहा था। दूसरे ने जवाब दिया, स्पष्ट नहीं बता सकता कि वह स्त्री सुन्दर थी या नहीं। तीसरे ने कहा, वह सुन्दर भी थी तथा मुस्कराकर आगे बढ़ गई।

इस घटना का बुद्ध को पता चला तो उन्होंने पहले युवक को जाने दिया और कहा, यह ज्ञान तथा साधना के क्षेत्र में सफल हो सकता है और उसे अपने आश्रम में साधना की स्वीकृति दे दी। अन्य दो युवकों को अपने पास बुलाकर उन्हें अगले 15 दिनों के लिए एक नई साधना का प्रयोग करने को कहा। प्रयोग इस प्रकार था – **'यदि किसी सुन्दर स्त्री का शरीर चिन्तन में आये तो किसी वृद्ध स्त्री का चेहरा उस सुन्दर स्त्री के चेहरे पर लगाकर मन से पूछना, क्या जो शरीर अनित्य की ओर बढ़ रहा है, तुझे ऐसे शरीर की कामना है?'** कहते हैं, 15 दिनों बाद जब वे दोनों युवक बुद्ध से मिले तो दूसरा युवक इस प्रयोग में सफल हो साधना के मार्ग पर चल पड़ा। तीसरे ने कहा, महाराज, अभी भी काम मुझ पर उसी प्रकार सवार है। तब बुद्ध ने पूछा कि **क्या तुम्हारे जीवन में ऐसी कोई देवी है जिसमें तुम्हारी अपार श्रद्धा हो। तीसरे युवक ने तपाक से अपनी माँ का जिक्र किया। बुद्ध ने फिर साधना का तीसरा प्रयोग करने को कहा, जो इस प्रकार था – 'जब कामवृत्ति आकर किसी शरीर को**

ध्यान में दिखाये तो तुम अपनी माँ का चेहरा उस शरीर पर जड़ दो।' कहते हैं, तीसरा युवक इस प्रयोग में पूर्ण सफल रहा और वह भी मुक्ति की साधना में चल पड़ा।

(शेष..पृष्ठ 25 पर)

जब आवे संतोष धन ...

• ब्रह्माकुमार साहनी, साकेत नगर, भोपाल

कैसी विडंबना है कि अनेक प्रकार के वैभवों व साधनों के बीच रहते भी आज का मनुष्य दुखी, अशान्त, तनावग्रस्त तथा खाली-खाली-सा नज़र आता है। उसके चेहरे से संतुष्टता का तेज तथा रूहानियत की चमक न जाने कहाँ गायब हो गई है। ऐसा लगता है जैसेकि उसने बहुत कुछ पाकर भी सब कुछ खो दिया है। आज किसी भी मनुष्य से पूछा जाये कि क्या वह जीवन से संतुष्ट है? जवाब होगा, नहीं। आखिर ऐसा क्यों? समस्त भौतिक सुख-सुविधाएँ प्राप्त होने के बाद भी वह संतुष्ट क्यों नहीं? कारण बहुत ही स्पष्ट है। आज तक मनुष्य ने जो भी प्राप्तियाँ की हैं, वे विनाशी हैं और उसने उन्हीं भौतिक, विनाशी तथा अल्पकालीन सुखों को ही सच्चा सुख अथवा आत्मिक सुख समझ लिया है। उसने विषय-भोग अथवा देह-भोग को ही परमानन्द और अतीन्द्रिय सुख का साधन मान लिया है और ज्यों-ज्यों इसमें लिप्त होता गया, त्यों-त्यों और अधिक दुखी व अशान्त होता गया। मृगतृष्णा के समान उनके पीछे ही भागता गया। शान्ति एवं संतुष्टता के लिए उसने जो रास्ते अपनाए वे सर्वथा मानवीय मूल्यों और प्राकृतिक नियमों के प्रतिकूल रहे और उसके जीवन में संतुष्टता के बदले और अधिक असंतुष्टता व्याप्त होने लगी।

संतुष्टता क्या है?

अब प्रश्न यह है कि संतुष्टता क्या है? मानव स्वभाव के मनोवैज्ञानिक पहलू का विश्लेषण किया जाये तो हम पायेंगे कि संतुष्टता एक स्वस्थ जीवन जीने की कला है। यह एक व्यवहारिक जीवन-दर्शन है। यह कोई बाहरी चीज़ नहीं बल्कि हमारे अंदर की वास्तविक मनोस्थिति है, एक सकारात्मक दृष्टिकोण है। उदाहरणार्थ, एक गिलास को पानी से आधा भर दीजिए। संतुष्ट व्यक्ति कहेगा, आधा गिलास पानी से भरा है, दूसरी ओर असुंष्ट व्यक्ति कहेगा, आधा गिलास तो पानी से खाली है। दृष्टिकोण ही हमारे जीवन की संतुष्टता व असंतुष्टता अथवा सुख व दुख की कसौटी है। संतुष्ट मनुष्य हर स्थिति तथा परिस्थिति में एकरस स्थिति में स्थित रहता है, वह आत्मसुख के झूले में झूलता रहता है। वह हार में भी जीत का अनुभव करता है, वह दुख के गंभीर क्षणों में भी सुख ढूँढ़ ही लेता है। वह स्वयं से संतुष्ट रहता है, सभी उससे संतुष्ट रहते हैं, साथ ही साथ वह भी सभी से संतुष्ट रहता है क्योंकि ज्ञानी, योगी मनुष्य की निशानी ही संतुष्टता है। जहाँ संतुष्टता है वहाँ सर्वगुण और शक्तियाँ विद्यमान हैं, कोई भी गुण तथा शक्ति अप्राप्त नहीं है।

संतुष्टता गायब होने के कारण

संतुष्टता गायब होने के मात्र दो ही मुख्य कारण हैं। एक है अन्तहीन इच्छाएँ और दूसरा है असीमित अपेक्षाएँ। मनुष्य को विनाशी इच्छाओं ने इस हद तक जकड़ लिया है कि वह इन्द्रियों के स्वामी के बदले उनका दास बनकर रह गया है।

संतुष्टता गायब होने का दूसरा कारण है असीमित अपेक्षाएँ। आज का मनुष्य दूसरों से इतनी अधिक अपेक्षाएँ रखे हुए है कि शायद एक जीवन तो क्या कई जीवन लेने के बाद भी उसकी अपेक्षाओं के अनुसार शायद ही कोई मनुष्य खरा उतर पाए।

संतुष्ट कैसे रहें

इच्छाएँ और अपेक्षाएँ हमें कभी भी सुख-शान्ति से नहीं रहने देती क्योंकि इनका मुख्य आधार ही व्यक्तिगत स्वार्थ, भौतिक प्राप्तियाँ और अल्पकालीन सुख है और इच्छा कभी भी जीवन में किसी को भी अच्छा बनने नहीं देती। फिर यह कहाँ की बुद्धिमत्ता है कि हम मायावी तृष्णाओं में फँसे रहें। प्रसन्न और संतुष्ट रहने के लिए आवश्यक है कि हम इच्छाओं और अपेक्षाओं को सीमित करें, जीवन जीने का तरीका बदलें, मनसा, वाचा, कर्मणा से संपूर्ण पवित्र बनें, हमारे मन में दूसरों के प्रति शुभकामना और शुभभावना हो और हमारा व्यवहार किसी पूर्वाग्रह से ग्रस्त न हो। हम उन छोटे-छोटे छिद्रों को भी बंद करें जहाँ से हमारी प्रसन्नता

अथवा संतुष्टता गायब होती है। ये छिद्र ईर्ष्या, द्वेष, संशय, अनुमान, मान-शान पाने की सूक्ष्म इच्छा और अनावश्यक प्रतिस्पर्धा आदि हो सकते हैं। उचित यही है कि जो भी समय पर उपलब्ध हो उसी में संतुष्ट रहना सीखें, न कि दूसरों के गगनचुम्बी महलों को देखकर, मायावी चित्ताकर्षक चकाचौंध में आँखें बंद कर अपने छोटे से घरौंदे अथवा सुखी संसार को भी जला बैठें। किसी ने इस संदर्भ में कहा है – 'कामना तो सागर की भांति है, ज्यों-ज्यों हम उसकी आवश्यकता की पूर्ति करते हैं, त्यों-त्यों उसका कोलाहल बढ़ जाता है।' जीवन में दूसरों के साथ अच्छा व्यवहार करें, उनके लिए त्याग भी करें लेकिन बदले में कुछ पाने की अपेक्षा से नहीं बल्कि अपना कर्त्तव्य समझ कर अथवा 'नेकी कर दरिया में डाल' के सिद्धान्तानुसार। इस प्रकार के दृष्टिकोण से हम जीवन में काफी हद तक सुखी और संतुष्ट रह सकते हैं। परन्तु सदाकाल की प्रसन्नता अथवा संपूर्ण संतुष्टता की अनुभूति तो केवल परमात्म प्राप्ति से ही संभव है जोकि हमारा लक्ष्य और जन्मसिद्ध अधिकार है।

परमात्म प्राप्ति से ही आत्मा आत्म-सुख, संपूर्णता अथवा पूर्ण तृप्ति का अनुभव कर सकती है। अब प्रश्न यह है कि जीवन में व्यवहारिक रूप से यह स्थिति कैसे आये क्योंकि विषय-चिन्तन मन का बहुत काल का अभ्यास-सा बन गया है। मन का यह भी स्वभाव है कि जिस वस्तु में लगने का अभ्यास हो जाता है, उससे वह सहज हटना नहीं चाहता। मन को विषय-चिन्तन से हटाकर परमात्मा में लगाने के लिए उसे धीरज, स्नेह और विवेक द्वारा नये अभ्यास में लगाना होगा। तदानुसार अपने को परमात्म प्राप्ति का लक्ष्य दें और विकारी प्रवृत्तियों को छोड़कर कल्प पहले के अपने संतुष्टता और शान्ति के मौलिक स्वरूप को पुन: धारण करें। अनुभव करें कि यह पुरानी दुनिया तो कब्रिस्तान बनने वाली है। ये व्यक्ति, वस्तु, वैभव सब तो यहीं छूटने वाले हैं फिर बुद्धि इनमें क्यों उलझाएँ? इन विनाशी और अल्पकालीन प्राप्तियों से खुश क्यों होएँ? इस प्रकार दिन में दो-तीन बार यह अभ्यास करें और **रोज़ प्रात: अमृतवेले में स्नान आदि करके योगयुक्त होकर बुद्धियोग शिव बाबा से लगाएँ अर्थात् राजयोग का अभ्यास करें तो हमें परमात्म अनुभूति होने लगेगी जिससे दिव्य अलौकिक शक्तियाँ प्राप्त होंगी और स्मृति श्रेष्ठ बनने लगेगी। तीसरा नेत्र खुल जायेगा, कल्प पहले की स्वयं की, बाप की और ड्रामा की पहचान होने लगेगी, स्थिति 'इच्छा मात्रम् अविद्या' स्वरूप बन जायेगी। मन रूपी मोर नाच उठेगा और कह उठेगा 'जो पाना था सो पा लिया।'** हम सदाकाल के अतीन्द्रिय सुख और आत्मसुख के झूले में झूलने लगेंगे। बस, यही है संपूर्ण संतुष्टता, पूर्ण तृप्ति और जीवन में प्रसन्न रहने का एकमात्र तरीका। अत: जीवन में संपूर्ण संतुष्ट और प्रसन्न रहना है तो हम राजयोग का नित्य अभ्यास करें जिसकी नि:शुल्क शिक्षा प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय के किसी भी सेवाकेन्द्र से ली जा सकती है। ❖

वृत्ति नियंत्रण ..पृष्ठ 23 का शेष

उपरोक्त प्रयोग किसी भी साधक के लिए सहयोगी हो सकते हैं। काम विकार से मुक्ति का एकमात्र उपाय पुरुषार्थ ही है। कोई देवी,देवता, पीर, फकीर इसमें कोई मदद नहीं कर सकता। आज का पुरुषार्थ कल की प्राप्तियों का आधार है। सबसे सरल तरीका तो प्यारे बाबा ने हमें बता दिया है कि पाँच तत्वों के शरीर को चलाने वाली चेतन आत्मा भृकुटी में विराजमान है। आत्मायें सभी पुल्लिंग हैं और भाई-भाई हैं। अत: आत्मस्थिति में टिककर, दूसरे शरीरधारी को (चाहे स्त्री, चाहे पुरुष) आत्मा भाई समझने से शुद्ध स्नेह उत्पन्न होता है। इस शुद्ध स्नेह के अनुभव से, कामविकार सहित अन्य सभी नकारात्मक भावनायें भी समाप्त हो जाती हैं। इसी सिद्धान्त एवं पुरुषार्थ से हम नई दुनिया में श्री लक्ष्मी व श्री नारायण का पद पा सकेंगे। ❖

लौकिक परिवार बन गया अलौकिक

• ब्रह्माकुमार वेदप्रकाश अग्रवाल, मजूरा गेट (सूरत)

मुंबई गोरेगाँव वेस्ट में, सन् 1992 में श्रीकृष्ण जन्माष्टमी पर लगी वह आध्यात्मिक झांकी मेरे जीवन की यादगार बन गई। यह सुनकर कि गीता के भगवान श्री कृष्ण नहीं बल्कि परमपिता परमात्मा शिव हैं, मेरी बुद्धि का ताला खुल गया। अकेले ज्ञान में चलना मुझे अधूरा-अधूरा लगता था। बार-बार यही शुभ संकल्प आता था कि यह सच्चा ज्ञान परिवार के सभी सदस्यों को भी मिले। बाबा भी कहते हैं, खैरात घर से शुरू होती है *(Charity begins at home)*।

आठ महीने बाद व्यापार की वजह से हम सूरत (गुजरात) में आ गये और स्थानीय सेवाकेन्द्र से जुड़ गये। सेवाकेन्द्र से जुड़ने के बाद हमारी और हमारे साथ लौकिक परिवार की भी ईश्वरीय भोग, भोग के जल, मधुबन की यात्रा, मधुबन के प्रसाद, बहनों की पावन दृष्टि, ज्ञान के साहित्य तथा ईश्वरीय गीतों आदि के द्वारा पालना होती रही।

ईश्वरीय ज्ञान से मानव की दृष्टि पावन हो जाती है क्योंकि उसका दृष्टिकोण बदल जाता है। युगल और परिवार के प्रति मेरा दृष्टिकोण इतना ऊँचा हो गया कि युगल देवी रूप नज़र आने लगी और परिवार के सभी सदस्य भगवान के बच्चे। जब भगवान को पहचान लिया, जान लिया, दिल का संबंध उनसे जोड़ लिया तो सभी के प्रति शुभकामनायें मन में भर गईं। लौकिक परिवार के 25 सदस्यों को मैं नित्य अमृतवेले ईश्वरीय दुआओं से सींचने लगा।

जब हम खुद भी दुआएँ देते हैं और परमात्मा पिता से भी सबके लिए दुआएँ करते हैं तो धीरे-धीरे यह परिणाम निकलता है कि उनके और हमारे दिलों में दुआएँ एकत्रित होते-होते शेष सब पुरानी बातें निकल जाती हैं। दुआएँ देने की, दिलों को साफ रखने की यह सेवा बहुत धैर्य की है। सफलता तभी मिलती है जब हम देह और देह के संबंधों से न्यारे होकर, बेहद में टिककर, बेहद पिता की गहन स्मृति में स्थित होकर सेवा करते हैं।

कई बार कइयों के प्रति शुभ सोचने पर भी उनसे नकारात्मक प्रतिक्रिया मिलती है तो समझ लीजिए, नकारात्मक भावों की जड़ें बहुत गहरी हैं जिन पर अभी और अधिक शुभभावनाओं के लेप की ज़रूरत है। लंबे समय तक फल देने वाले वृक्ष को फल तुरंत तो नहीं लग जाता अत: मेहनत ज़्यादा करनी पड़ती है। मण भर कहने के बजाय कण भर धारणा अधिक अच्छी है। परिवार के लोग हमारे बोल को कम और कर्मों को ज़्यादा देखते हैं। जब हम ज्ञान-मार्ग पर चलते हैं तो वे सभी यह ध्यान देने लग जाते हैं कि यह जो कहता है वो करता भी है या नहीं। इससे हमें बहुत फायदा होता है, हम अपने कर्मों के प्रति पूर्ण जागरूक रहते हैं।

जैसे दूध से भरी कढ़ाई को फाड़ने के लिए नींबू के रस की एक बूंद काफी है ठीक उसी प्रकार एक ही बार यह सोचना कि यह नहीं सुधरेगा, यह अज्ञानी है, यह क्या ज्ञानी-योगी बनेगा, इसका पार्ट नहीं है, उस आत्मा को ज्ञान-मार्ग की तरफ आकर्षित होने से रोकने जैसा है।

उपरोक्त सभी बातों का ध्यान रखते हुए मैं लौकिक परिवार को शिव बाबा की दुआयें देता रहा। आज हम छह भाई, छह उनकी युगलें, मेरे माता-पिता और हम सबके बाल-बच्चे प्यारे बाबा की नियमित ज्ञान-मुरली सुनते हैं और मज़े में हँसी-खुशी में जीवन व्यतीत कर रहे हैं। ❖

साधन निमित्त मात्र हैं, साधना निर्माण का आधार है। साधन को महत्त्व नहीं दो, साधना को महत्त्व दो। सदा यह समझो कि मैं सिद्धिस्वरूप हूँ, न कि साधन स्वरूप। साधना सिद्धि को प्राप्त करायेगी। साधनों के आकर्षण में सिद्धिस्वरूप को न भूल जाओ।

मेरी अर्धवार्षिक परीक्षा

• ब्रह्माकुमार सुशील भाई सक्सेना, बड़ौदा (डेरी)

बाबा कहते हैं, सब कुछ अचानक होगा। सच है, 23 फरवरी, 2009 की रात्रि साढ़े बारह बजे मुझे दिल का भयानक दौरा पड़ा। बेचैनी तथा बेबसी की चीखें निकलने लगीं। तुरंत पड़ोसी डाक्टर विवेक अग्रवाल मुझे, मेरी युगल और एक पड़ोसी को अपनी कार द्वारा बडौदा हार्ट इंस्टीट्यूट एण्ड रिसर्च सेन्टर ले गये। चेतन मन चीख रहा था और अवचेतन मन विघ्नविनाशक परमरक्षक शिव पिता को इस प्रकार याद कर रहा था – 'बाबा, आप रोज़ कहते हैं, मीठे बच्चे, मैं दुखहर्त्ता-सुखकर्त्ता हूँ। दया का सागर, करुणा का सागर हूँ, दुखों से छुड़ाने आया हूँ, मुझे हर संबंध से याद करो, मुझे आजमाओ। बाबा, आज मेरे इस दुख की घड़ी में आप क्यों नहीं सुन रहे हैं? क्या 13 वर्ष के ब्रह्माकुमार जीवन में मेरा कोई भी ऐसा पुण्य जमा नहीं है जो इस भयानक पीड़ा को शान्त करे? कहाँ गये आज आप के वे सब वचन?'

इस प्रकार परमरक्षक को याद करते-करते हॉस्पिटल पहुँचा और स्वयं स्ट्रेचर पर लेट गया। फिर बाबा को कहा, 'बाबा मैं आ रहा हूँ' और बुद्धियोग बल से सेकंड में परमधाम पहुँच गया। डॉक्टर ने स्ट्रेचर पर चेक कर कहा, 'इनमें कुछ नहीं है, न नब्ज है, न ई.सी.जी. शरीर पर काम कर रहा है, न ही बी.पी.'। फिर भी डॉक्टर विवेक अग्रवाल के आग्रह पर मुझे आई.सी.यू. में ले जाया गया जैसा कि मेरी युगल ने बताया है। उधर मैं परलोक पहुँच चुका था। चारों ओर शून्य, लाल प्रकाश में सफेद प्रकाश पुंज चमक रहा था। वहाँ अनुभव हुआ, परमश्रेष्ठ (ऊपर वाले) डॉक्टर एवं सर्जन शिवबाबा नीचे वाले डॉक्टर को इस प्रकार श्रीमत दे रहे थे, 'इसे कुछ नहीं हुआ है, इसके मुख से ट्यूब डालो और ऑक्सीजन दो, सब ठीक हो जायेगा।' फिर बाबा ने मुझे कहा, 'आओ बच्चे, बैठो, मुरली सुनो।' किसी ने मुझे नोटबुक और पेन दे दिया। बाबा जो बोलते गये, मैं लिखता गया। कुछ समय बाद परमशिक्षक ने कहा, 'अच्छा, अब जाओ।' और मुझ आत्मा ने शरीर में पुन: प्रवेश कर लिया।

मुझे आभास होता है कि बाबा ने मुझ आत्मा को अपने पास, नीचे डॉक्टरों द्वारा प्रक्रिया होने तक रखा कि कहीं आत्मा इतने समय में भटक न जाये और फिर शरीर में पुन: प्रवेश करा दिया। अब तक नब्ज (पल्स), ई.सी.जी., बी.पी. संतोषजनक रीति से शरीर में काम करने लगे थे। डॉक्टर भाई भी आश्चर्य में थे।

प्रात: 8 बजे डॉक्टरों की टीम देखने आई, मैंने उनसे पूछा, 'क्या आपने मेरे मुँह से पाइप डाली थी और फिर ऑक्सीजन दी थी?' डॉक्टर ने कहा, 'हाँ, किंतु आपको यह कैसे मालूम हुआ?' मैंने कहा, 'मैंने परमश्रेष्ठ डॉक्टर भगवान शिवबाबा को ऐसी श्रीमत देते हुए परलोक में सुना था।' डॉक्टर बोले, 'ब्रह्माकुमारीज़ में प्राप्त ज्ञान और राजयोग का ही आप पर प्रभाव है जो आप चेतन अवस्था में शीघ्र आ गये और अब भी अपनी ब्र.कु. बहन जी से सरल रीति से बातें कर रहे हैं।'

मैं आत्मा समझता हूँ कि यह मेरी अर्धवार्षिक परीक्षा थी जिसमें परमशिक्षक, परमसतगुरु ने पास विद् ऑनर कर दिया है। मैं जीवात्मा अब अपने सेवाकेन्द्र पर भी जाने लगा हूँ। मैं आत्मा सत्यनिष्ठा से कहता हूँ –

1. संगमयुग अर्थात् परिवर्तन युग के इस अंतिम समय में अपने को अजर, अमर, अविनाशी, ज्योतिबिन्दु आत्मा समझ निराकारी परमश्रेष्ठ ज्योतिबिन्दु शिवबाबा को हर समय, हर संबंध से याद करें और ज्ञान के संकल्प चलायें तो परमात्म प्रेम की अनुभूति अवश्य होगी और दूसरों को अपने उज्ज्वल मस्तक एवं चमकते नयनों से अनुभव करा सकेंगे। ईश्वरीय सहायता भी मिलती रहेगी।

2. जो बहुत समय के संस्कार होते हैं वही अंत की स्थिति होती है। यदि अभी से परमात्म याद के संस्कार होंगे तो अंत में यही सहायक होंगे।

3. अपने योग और बाप के सहयोग से फरिश्तेपन का अनुभव होगा और विदेही अवस्था शीघ्र प्राप्त होगी। बाप के साथ घर जा सकेंगे।

तो आइये, ऐसा करके देखें।

❖

भस्मासुर मत बनिये

• ब्रह्माकुमार दिनेश, हाथरस

भस्मासुर की कहानी से अधिकांश लोग परिचित हैं। भस्मासुर ने शिव से वरदान प्राप्त किया कि वह जिसके सिर पर हाथ रखे, वह भस्म हो जाये। असुरत्व और देवत्व में यही अंतर है। आसुरी प्रवृत्ति का मनुष्य शक्तियों को प्राप्त कर उनका दुरुपयोग आरंभ कर देता है और दैवीय प्रवृत्ति वाला, प्राप्त हुई शक्तियों को सद्भावना के कारण चराचर जगत के कल्याण की सेवा में अर्पित कर देता है।

भस्म होती है 114 कैलोरी ऊर्जा

भस्मासुर वास्तव में विकारों का ही प्रतीक है। किसी भी विकार के वशीभूत व्यक्ति की मंशा तो यही होती है कि वह दूसरे को भस्म करे पर इस कुक्रिया में, दूसरे से पहले वह स्वयं भस्म हो जाता है। उदाहरण के लिए, काम विकार के गर्त में गिरने वाले को ही लीजिए। वह स्वयं को भस्म कर रहा होता है और फिर दूसरे की पवित्रता का गला घोंट रहा होता है। जीव विज्ञान के अनुसार एक बार इस विकार के वशीभूत होने पर 114 कैलोरी ऊर्जा भस्म *(Burn)* होती है। इसका अल्प अहसास मनुष्य को तत्क्षण हो भी जाता है परन्तु यौवनावस्था में या विकार के जोश में होश गंवाया हुआ, अहंकार के वशीभूत वह इन विषय-भोगों के दुष्परिणामों का अनुभव नहीं कर पाता और फिर-फिर विषय-सागर के गर्त (गटर) में गिरता ही रहता है। जिस प्रकार खुजली के रोग से ग्रस्त रोगी को खुजली करते समय बड़ा आनन्द महसूस होता है परंतु बाद में होने वाली जलन और निकलने वाला रक्त उसे व्याकुल करता है। इसी प्रकार विकारों में रत मूढ़मति लोग जिसे सुख कहते हैं, उस काम विकार के उपरांत रोग, शोक और शारीरिक दुर्बलता का अनुभव करते हैं।

शिव संहिता में आगाह किया गया है – 'मरणं बिन्दु पातेन, जीवनं बिन्दु धारणात्' अर्थात् बिन्दु का पतन मृत्यु है और बिन्दु की स्थिरता जीवन है। अथर्ववेद भी कहता है – 'ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युं उपाघ्नत' अर्थात् देवताओं ने ब्रह्मचर्य के तप से मृत्यु पर विजय प्राप्त की। मृत्यु पर विजय प्राप्त करने का अर्थ यह कदापि नहीं है कि शरीरांत कभी नहीं होता। इसका अर्थ यह है कि शरीरांत समय पर और दीर्घायु में होता है और जब साधक बिन्दु को ऊर्ध्वगामी बना लेता है तो उसे काल, मृत्यु, प्राणक्षय का भय नहीं रहता – 'ऊर्ध्वरेता भवेद्यावत् तावत् कालभयं कृतः।'

युवा अनभिज्ञ हैं
ब्रह्मचर्य के लाभों से

यादगार ग्रंथ महाभारत में, अर्जुन द्वारा हराये गये चित्ररथ ने कहा – 'ब्रह्मचर्य परमोधर्मः सचापि निवतस्त्ययि।' ब्रह्मचर्य परमधर्म है जो आपमें विद्यमान है, इसीलिए मैं हार गया। परन्तु ये सब वेद, पुराण इत्यादि कहते रहे और मानव अपने मन की करता हुआ निरन्तर गर्त में गिरता रहा। आज की स्थिति इतनी विकट है कि किशोरवय और युवाओं में से अधिकांश को ब्रह्मचर्य के लाभों का रिंचक भी ज्ञान नहीं, वे अनभिज्ञ हैं इस महाओज से। श्रीमद्भगवद् गीता, वेद, पुराण, शास्त्र, धर्म, संप्रदाय, मठ, पंथ और अनेकानेक ऋषि, मुनि, चिंतकगण 'भोगों से रोग और योग से निरोग' होने की बात समझाते रहे हैं परन्तु आज के भोगलिप्त मानव के कान पर ये सद्वचन (कर्णरस की तरह) सिर्फ मक्खी की तरह बैठते हैं जिन्हें वह अपने सांसारिक सुखों की नींद में खलल समझकर उड़ा देता है या फिर योग, ब्रह्मचर्य आदि की बातें करने वालों की खिल्ली उड़ा देता है।

कहाँ गई संयम की शिक्षा?

हर धर्म, हर पंथ ने मनुष्य को भस्मासुर बनने से रोकने का प्रयास किया है। भाद्रपद मास में जैन धर्म में पर्युषण पर्व मनाया जाता है जिसमें धर्म के दस लक्षणों – क्षमा, मार्दव, आर्जव, शौच, संयम, सत्य, तप, त्याग, अकिञ्चय और ब्रह्मचर्य को स्थान दिया गया है। अठारह दिनों के इस महापर्व में साधकगण संयमी बनने का पुरुषार्थ करते हैं। व्रत रखते हैं, भूखे-प्यासे रहते हैं। इस्लाम मजहब में

रमजान का पवित्र मास भी इसी समय आता है जिसमें भी रोजे रखकर पूरा दिन खान-पान की बंदिश रखते हैं। साथ ही हर प्रकार के बुरे विचारों, बुराइयों, गुनाहों, लालच, हवस (काम विकार), गुस्सा, गरूर आदि से मुक्त रहने का प्रयास करते हैं। ईसाइयों को बाइबिल के माध्यम से और सिक्खों को गुरुग्रंथ साहिब के माध्यम से यह चेतावनी दी जाती रही है कि वे भोगी, विलासी जीवन की ओर अग्रसर न हों और इंद्रियों का संयम रखें। सनातन धर्म वालों के नवरात्रि पर्व में भी नौ दिन तक उपवास, व्रत, नियम और संयमपूर्ण जीवन की भक्तगण अनुपालना करते हैं। कहने का भाव यह है कि वर्ष में कोई ही ऐसा दिवस होगा जिसमें कि व्रत, उपवास न होते हों और नियम, संयम की बात न की जाती हो। हिन्दू सनातनियों में अष्टांग योग की बात भी होती है। भारत में योग सिखाने वाले योगाचार्यों की बाढ़ जैसी आई हुई है लेकिन अधिकांश का ध्यान अष्टांग योग के एक अंग 'आसन' की तरफ अधिक रहता है और जो योग के शेष सात अंग क्रमशः यम, नियम, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि बताये हुए हैं और उनके भी अंग सत्य, अहिंसा, अस्तेय, ब्रह्मचर्य आदि पर न तो अधिक जोर दिया जाता है और न ही योगासन करने वाले ही उन पर अधिक ध्यान देते हैं। अष्टांग योग की जो बात की जाती है उसमें आसन का स्थान तो तीसरा है परंतु जीवन को मांजकर रख देने वाले प्रथम दो अंग – यम और नियम को आचरण में लाये बिना योग की परिपूर्णता है ही नहीं। माफ करियेगा, आज यौन शिक्षा देने की भी बात जोर-शोर से की जा रही है और कई जगह पाठ्यक्रम लागू भी हो चुका है परन्तु योग और संयम की शिक्षा देने की जहमत बहुत कम और न के बराबर उठाई जाती है। यौन शिक्षा तो एक प्रकार से इस विकार का अनछुये मस्तिष्क पर नया बीजारोपण है। **विकार के बीजारोपण की जगह संयम का बीजारोपण हो तो समाधान भी होता, नहीं तो हर रोज़ गुरु-शिष्य परंपरायें ध्वस्त होती जा रही हैं और मर्यादाओं के ध्वस्त होने के किस्से संचार माध्यमों के द्वारा समाज में फैल रहे हैं।**

कई लोग तो जीवन के तीसरे और चौथे चरण में वानप्रस्थ और संन्यास का पालन भी नहीं करना चाहते। परन्तु जो करना चाहते हैं उनकी वृद्धावस्था की ओर बढ़ते हुए प्रायः ऐसी स्थिति हो जाती है जैसे कि गन्ने की छूँछ (कचरा) जिसका सारा रस निकल गया होता है। ऐसी शक्तिहीन स्थिति को लेकर अंत में वह प्रभु की शरण में आता है। अब ऐसे का प्रभु भी क्या करे परन्तु प्रभु फिर भी इतना दयालु, उदार है कि वह उनमें भी आत्म-जागृति द्वारा शक्ति भरकर, नया जीवन देकर सद्कल्याण के मार्ग पर लगा ही लेता है। लेकिन समझदार वही है जो जवानी का काम जवानी में ही करे, बुढ़ापे के लिए न छोड़े। ईश्वरीय सेवा भी उन अनिवार्य कामों में एक काम है।

किसी को वरगलाने का महापाप न करें

द्वापर युग से मनुष्य का नैतिक और चारित्रिक पतन प्रारंभ होता है, वह इन विकारों के इतना वशीभूत हो जाता है जैसे कि हार ही मान लेता है। सामाजिक संस्थाओं में भी कई बार ऐसे भस्मासुर घर कर लेते हैं। अरे भस्मासुरो, जिस शिव (ईश्वर) ने तुम्हें शक्तियाँ और गुण प्रदान किये, तुम्हें विकारों की दलदल से निकालने का सुगम पथ दिखाया, गुणों से तुम्हारा शृंगार किया, उनका अहसान मानने की बजाय, शुक्रिया करने की बजाय तुम उनसे ही प्राप्त शक्तियों का दुरुपयोग करते हो। तुम उनकी ही साधना में रत पार्वतियों पर नज़रें गड़ाते हो। जिन्हें सद्शिक्षा के लिए भगवान ने चुना, तुम उन्हीं को शिव से विरत करने की और खुद से जोड़ने की कुचेष्टा करते हो। जो शिव की आराध्या हैं, शिव ही जिनके पति परमेश्वर, भरतार (भरण-पोषण करने वाले) हैं, उन भोली-भाली कन्याओं को, राम की सीताओं को तुम संसारी आकर्षणमय स्वर्णमृग दिखलाकर वरगलाते हो, फुसलाते हो, व्यर्थ परचिंतन, परदर्शन की बातें करके साधना से विरत करने का

महापाप करते हो। अब भस्मासुर मत बनो और न ही स्वयं को इस काम के भयंकर विष से भस्म करो। युवाओं के लिए सच्चरित्रता का, लक्ष्मण से बढ़कर उदाहरण क्या हो सकता है! सीता के आभूषण देख लक्ष्मण ने कहा –

नाहं जानामि केयूरे,
नाहं जानामि कुण्डले।
नूपुरे त्वभिजानामि,
नित्यम् पादाभिवन्दनात्।।

ये कुण्डल, ये टीका इत्यादि तो नहीं जानता लेकिन चरणस्पर्श करने के कारण इन नूपुरों को अवश्य पहचानता हूँ। अब कलिकाल में कहाँ लोप हो गये वे चरित्र! कहाँ गई वह शिष्टता! कहाँ गई वह मर्यादा!

हे आत्मन्, अगर यौवन इतना ही कुलांचे भरता है, जवानी कुछ कर गुज़रने को ही तड़प रही है तो आतंकवाद, संप्रदायवाद, जातिवाद, धर्मवाद आदि से ग्रस्त राष्ट्र को और सारे विश्व को मुक्त करने की सेवा में इसे लगा दो। इस जीवनशक्ति को ऊर्ध्वगामी बनाकर अपने मस्तिष्क को सुदृढ़ और बुद्धि को प्रखर बनाओ। 'अंग्रेजो भारत छोड़ो' आंदोलन तो पूरा हुआ, अब 'भोगो भाग जाओ' इस नारे से भारत सहित सारे विश्व को भोगों की जंजीरों से छुड़ा दो और दृढ़ संकल्प करो,

हो रविवार या मंगलवार
कभी ना हुए काम विकार।

❖

महाशिवरात्रि की बधाई

कवि भाई, उत्तम नगर (नई दिल्ली)

आत्मस्वरूपी प्रिय, रूहानी बहनो एवं भाई।
आप सभी को पावन शिवरात्रि की श्रेष्ठ बधाई।।

यह त्योहार सभी से ऊँचा अनुपम एवं न्यारा।
दिव्य जन्म ले परमपिता शिव, इस दिन स्वयं पधारा।।

मुक्ति–जीवन्मुक्ति दाता, एक वही सुखराशी।
उसकी खातिर भक्तों ने, खाई है कलवट काशी।।

उसे ईश–अल्लाह–नूर, ओंकार–गोड कह गाया।
रामेश्वर–गोपेश्वर वो ही मक्केश्वर कहलाया।।

अणु–सा ज्योतिर्बिन्दु वो ही, गुण सिन्धु कल्याणी।
जातिधर्म से ऊपर उसने शिक्षा दी रूहानी।।

आत्म रूप से जग के सब मानव हैं भाई–भाई।
उसी पिता के बच्चे, हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई।।

जब इस जग में छा जाती, अज्ञान निशा अंधियारी।
धर्म–कर्म को भूल के मानव बनते असुर विकारी।।

यही समय शिवरात्रि, ज्ञान–सूर्य शिव तब ही आते।
सत्य धर्म स्थापित करते, श्रेष्ठ कर्म सिखलाते।।

पतितों के पावनकारी शिव, ब्रह्मा के बूढ़े तन में आये।
मानव को देव बनाने, फिर गीता के वचन सुनाये।।

आओ शिवरात्रि पर, शिव से बुद्धियोग जुड़ायें।
विकार रूपी अक, धतूरा शिव पर आज चढ़ायें।।

पवित्रता की करें प्रतिज्ञा, यह व्रत सबसे उत्तम।
कमल फूल सम, जग में रहकर बन जायें सर्वोत्तम।।

सुखमय जग रचने को आओ, मन के भेद मिटायें।
देश–धर्म–प्रभु सेवा में, यह जीवन सफल बनायें।।

ब्र.कु. आत्मप्रकाश, सम्पादक, ज्ञानामृत भवन, शान्तिवन, आबू रोड द्वारा सम्पादन तथा ओमशान्ति प्रिन्टिंग प्रेस, शान्तिवन -307510, आबू रोड में प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय के लिए छपवाया। संयुक्त सम्पादिका - ब्र.कु. उर्मिला, शान्तिवन
E-mail : omshantipress@bkivv.org Ph. No. : (02974) - 228125 worldrenewal@bkivv.org